है। वह सदस्यों के बीच सम्बन्ध सुधारने का हर संभव प्रयास करता है। वह समूह के कार्यों को सभी सदस्यों में बाँट देता है। इस प्रकार के नेतृत्व में अधिकारों का विकेन्द्रीकरण देखा जाता है। यहाँ नेता तथा सदस्यों के बीच सीधा सम्बन्ध सम्भव होता है। उपसमूहों का निर्माण नहीं होता है अथवा बहुत कम होता है। अत: प्रजातांत्रिक समूह का मनोबल ऊँचा होता है। नेता के मर जाने या अनुपस्थित हो जाने पर भी समूह विघटित नहीं होता है। भारत में श्री जवाहर लाल नेहरू, श्री लालबहादुर शास्त्री, देवगौड़ा आदि इस प्रकार के नेता के उदाहरण हैं। लिपिट तथा ह्वाइट (1943) ने अपने अध्ययन के आधार पर प्रजातांत्रिक नेतृत्व की इन विशेषतओं की पुष्टि की।

(3) **अहस्तक्षेपी नेतृत्व :** अहस्तक्षेपी नेतृत्व उसे कहते हैं, जिसमें किसी समूह का नेता नाम-लेहाज होता है। उसे अपने सदस्यों पर कोई नियंत्रण नहीं होता है। सदस्यगण नेता पर निर्भर नहीं करते हैं। यहाँ प्रत्येक सदस्य को मनचाहे ढंग से रहने-सहने, काम करने, आदि की स्वतंत्रता रहती है। इस प्रकार का नेतृत्व शिक्षा के क्षेत्र में विशेष रूप से पाया जाता है, जहाँ न्यूनतम नियंत्रण होता है।

लेविन (1939) के प्रयोग के आलोक में अहस्तक्षेपी नेता की कई विशेषतायें स्पष्ट होती हैं :

(क) इस प्रकार के नेतृत्व में सदस्यों पर नेता का कोई नियंत्रण नहीं होता है।

(ख) नेता समूह के भिन्न-भिन्न कार्यों को सदस्यों पर ही छोड़ देता है।

(ग) नेता पर सदस्यों की निर्भरता की कमी पाई जाती है।

(घ) सदस्यों में अनुशासन का अभाव होता है।

(ङ) समूह की उत्पादकता औसत होती है।

(च) अहस्तक्षेपी नेता आत्म-अभिमुखी होता है। इस अर्थ में वह सत्ताधारी नेता तथा प्रजातांत्रिक नेता दोनों से भिन्न होता है, जो क्रमश: कार्य-अभिमुखी तथा सदस्य-अभिमुखी होते हैं।

7.5 सत्तावादी तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व में अन्तर

सत्तावादी नेतृत्व तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व की विशेषताओं या आधार-तत्वों की व्याख्या ऊपर की जा चुकी है। इससे दोनों प्रकार के नेतृत्व या नेताओं की व्याख्या अलग से करना चाहेंगे। लेकिन, अन्तरों की व्याख्या करने से पहले यह कह देना आवश्यक है कि इन दोनों प्रकार के नेताओं के बीच अधिकार, शक्ति या कार्य में बड़ी समानता है। अन्तर केवल अधिकारों या कार्यों को कार्यान्वित करने की विधियों में है। लिपिट एवं ह्वाइट (1943) तथा न्यूकम्ब एवं हार्टले (1958) के अध्ययनों के आलोक में इन दोनों प्रकार के नेताओं में निम्नलिखित अन्तर देखे जाते हैं–

7.5.1 सत्तावादी नेता में निरपेक्ष शक्ति अधिक होती है। वह समूह की नीतियों तथा योजनाओं के निर्माण में मनमानी करता है। इसके लिए समूह के सदस्यों से सलाह या सुझाव लेना आवश्यक नहीं है। दूसरी ओर प्रजातांत्रिक नेता में सापेक्ष शक्ति अधिक होती है। यहाँ नेता अपने समूह के लिए नीतियों तथा योजनाओं का निर्माण सदस्यों की सलाह के अनुसार करता है। प्राय: समूह के बहुमत को ध्यान में रखकर किसी नीति या योजना का निर्माण किया जाता है।

7.5.2 सत्तावादी नेतृत्व में अधिकारों का केन्द्रीकरण देखा जाता है। नेता ही अपने समूह के लक्ष्यों को निर्धारित करता है और वही लक्ष्यों को प्राप्त करने के साधनों को निर्धारित करता है। दूसरे सदस्यों को इसकी जानकारी नहीं रहती है। इसी तरह नेता स्वयं सदस्यों के बीच कार्य का बंटवारा करता है। दूसरी ओर प्रजातांत्रिक नेतृत्व में अधिकारों का विकेन्द्रीकरण देखा जाता है। प्रजातांत्रिक नेता समूह-लक्ष्य का निर्माण सदस्यों से मिलकर करता है। अत: सदस्यों को समूह के लक्ष्य की पूरी जानकारी रहती है। इसी तरह प्रजातांत्रिक नेतृत्व में नेता सदस्यों के सुझाव को भी कार्यों का बंटवारा करते समय ध्यान में रखता है।

7.5.3 सत्तावादी नेता कार्य-अभिमुखी होता है। वह सदस्यों के कल्याण की अपेक्षा समूह के कार्य पर अधिक बल देता है। वह किसी भी कीमत पर समूह के लक्ष्य को प्राप्त करना चाहता है, भले ही सदस्यों को नुकसान क्यों न हो जाए।

इसके विपरीत प्रजातांत्रिक नेता सदस्य अभिमुखी होता है। वह समूह के कार्य के साथ-साथ सदस्यों के कल्याण को भी ध्यान में रखता है। वह सदस्यों के कल्याण के लिए हर संभव प्रयास करता है, भले ही समूह-लक्ष्य विलंबित क्यों न हो जाए।

7.5.4 सत्ताधारी समूह के नेता तथा अनुयायियों के बीच सामाजिक दूरी अधिक होती है। उनके बीच कोई सीधा सम्पर्क नहीं होता है। प्रत्येक सदस्य नेता के लेफ्टिनेंट से संबंधित रहता है। इस प्रकार नेतओं की एक शृंखला बन जाती है। ऐसा तब होता है जबकि समूह बड़ा होता है। यदि समूह छोटा हो तो प्रत्येक सदस्य सीधे नेता से संबंधित रहता है। इसके विपरीत प्रजातांत्रिक समूह में नेता तथा अनुयायियों के बीच सामाजिक निकटता अधिक होती है। समूह छोटा हो या बड़ा, कोई भी सदस्य नेता से सम्पर्क स्थापित कर सकता है। इसके साथ-साथ सभी सदस्य आपस में भी संबंधित रहते हैं।

7.5.5 सत्तावादी नेता के सदस्यों का संबंध मैत्रीपूर्ण नहीं होता है। यहाँ सदस्यगण अपने विचार तथा व्यवहार में नेता के सामने विनम्र तथा आज्ञाकारी दीख पड़ते हैं। वे नेता को खुश करने के चक्कर में अपने व्यक्तित्व को प्रभावहीन बना लेते हैं। दूसरी ओर लोकतांत्रिक नेता के साथ सदस्यों का सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण होता है। यहाँ सदस्यगण अपने आपको नेता के साथ बराबरी का सम्बन्ध रखते हैं। वे एक-दूसरे के सुख-दुख में साथ देते हैं।

7.5.6 सत्तावादी नेतृत्व में पहल करने तथा आदेश देने की विधा प्रधान होती है और विचार करने की विधा गौण होती है। सत्तावादी नेता स्वयं किसी कार्य में पहल करता है और सदस्यों को उस कार्य को पूरा करने का आदेश देता है। वह दूसरे समूह के लक्ष्यों का निर्माण करता है, तथा उनको प्राप्त करने की योजना बनाता है। वह दूसरे सदस्यों से सुझाव नहीं भी ले सकता है और यदि लिया भी, तो उस पर अमल नहीं भी कर सकता है। दूसरी ओर प्रजातांत्रिक या लोकतांत्रिक नेता किसी भी कार्य करने के पहले सदस्यों से सुझाव लेता है और उस पर अमल करता है। समूह के लक्ष्यों को निर्धारित करते समय तथा उनको प्राप्त करने की योजना बनाते समय वह बहुमत को ध्यान में रखता है।

7.5.7 सत्तावादी नेता दमनकारी होता है। वह दमन की नीति पर अमल करता है। वह सदस्यों के साथ आक्रमणकारी व्यवहार कर सकता है। कभी-कभी आक्रमणशीलता के स्थान पर उदासीनता या भावशून्यता भी देखी जा सकती है। इसके विपरीत प्रजातांत्रिक नेता अपने अनुयायियों के प्रति सहानुभूति, सहकारिता, मित्र-भाव आदि का प्रदर्शन करता है।

7.5.8 सत्तावादी नेता अपने कार्य के लिए समूह के सदस्यों के प्रति उत्तरदायी नहीं होता है। वह किसी भी सदस्य को पुरस्कार या दण्ड अपनी इच्छा से दे सकता है। इसके लिए उससे कोई कैफियत या स्पष्टीकरण नहीं पूछा जा सकता है। दूसरी ओर प्रजातांत्रिक या लोकतांत्रिक नेता से किसी सदस्य को मिलने वाले पुरस्कार या दंड के सम्बन्ध में कैफियत या स्पष्टीकरण पूछा जा सकता है।

7.5.9 सत्तावादी समूह का मनोबल नीचा होता है। कई प्रकार के उपसमूह विकसित हो जाते हैं। सदस्यों में ''मैं-भावना'' अधिक होती है। वे समूह तथा नेता के प्रति नकारात्मक मनोवृत्ति रखते हैं। आपस में एकता तथा भाईचारे का भाव कम होता है। निम्न मनोबल के कारण नेता के मरने या अनुपस्थित होने पर समूह प्रायः विघटित हो जाता है। दूसरी ओर प्रजातांत्रिक समूह में मनोबल ऊँचा होता है। सदस्यों में ''हम-भवना'' अधिक होती है। वे समूह तथा नेता के प्रति अनुकूल मनोवृत्ति रखते हैं। आपस में एकता तथा भाईचारे का भाव पाया जाता है। उच्च मनोबल के कारण नेता के मरने या अनुपस्थित होने पर भी समूह संगठित रहता है।

7.5.10 सत्तावादी नेता सदस्यों में फूट डालकर उन पर शासन करता है। वह सदस्यों के बीच भेदभाव बनाये रखने का प्रयास करता है। इसके विपरीत लोकतांत्रिक नेता सदस्यों के भेदभाव के मिटाने तथा मेल-मुहब्बत को बढ़ाने का प्रयास करता है। वह मध्यस्थता करके सदस्यों के आपसी संघर्षों का समाधान करता है।

7.5.11 सामान्यतः सत्तावादी समूह की प्रभावशीलता सीमित होती है। सदस्यों में संतुष्टि का अभाव होता है। उनका मनोबल गिरा होता है। फलतः समूह की उत्पादकता घट जाती है। नेता की उपस्थिति में भय के कारण उत्पादन बढ़ जाता है और उसकी अनुपस्थिति में घट जाता है। दूसरी ओर अप्रजातांत्रिक समूह की प्रभावशीलता अधिक होती है। सदस्यों में

संतुष्टि अधिक पाई जाती है। नेता के उपस्थित या अनुपस्थित रहने का कोई प्रभाव उत्पादन पर नहीं पड़ता है। शॉ (1955) ने अपने अध्ययन में पाया कि समूह के सदस्य असत्तावादी नेता से अधिक संतुष्ट थे। लेकिन, उन्होंने यह भी देखा कि प्रजातांत्रिक समूह की अपेक्षा सत्तावादी समूह का कार्य मात्रा तथा गुण दोनों में बेहतर था। क्रेच आदि (1972) के अनुसार स्पष्ट तथा जटिल परिस्थितियों में समूह के सदस्य सत्तावादी नेतृत्व अधिक पसंद करते हैं।

क्रेच आदि (1982) ने अध्ययनों के आधार पर कहा है कि कार्य संतुष्टि के दृष्टिकोण से छोटे समूह के लिए सत्तावादी नेतृत्व तथा बड़े समूह के लिए प्रजातांत्रिक नेतृत्व अधिक उपयुक्त होता है।

इस प्रकार स्पष्ट है कि सत्तावादी नेतृत्व तथा प्रजातांत्रिक नेतृत्व के बीच उपर्युक्त कई अन्तर होते हैं।

7.6 नेता के कार्य

नेता अपने समूह का प्रधान होता है। अत: उसके जिम्मे अनेक प्रकार के कार्य होते हैं। समूह के लक्ष्यों तथा नेता के प्रकारों में अन्तर होने पर भी सभी नेताओं के प्राथमिक कार्य समान होते हैं। केवल मात्रा का अन्तर होता है। क्रेच आदि (1962, 1982) ने नेता के निम्नलिखित कार्यों का उल्लेख किया है :

7.6.1 कार्यपालक के रूप में

नेता अपने समूह में कार्यपालक का काम करता है। वह समूह के भिन्न-भिन्न कार्यों को कार्यान्वित करता है। वह सभी कार्यों को अपने सदस्यों के बीच बंटवारा करता है। जरूरत महसूस होने पर कुछ कार्यों को वह अपने अधीन रख सकता है। प्रजातांत्रिक नेता कार्यों के बंटवारे में सदस्यों से सलाह लेता है तथा उनके सुझाव पर अमल करता है, लेकिन सत्तावादी नेता के लिए आवश्यक नहीं है। कार्यों के बंटवारे में वह मनमानी कर सकता है। गैम्सन (1975) तथा मिलजर आदि (1975) के अध्ययन इस सम्बन्ध में विशेष रूप से महत्त्वपूर्ण हैं।

7.6.2 योजना निर्माण के रूप में नेता

नेता अपने समूह के लक्ष्यों को निर्धारित करता है और उन लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त करने के लिए अनुकूल योजनायें बनाता है। समूह-लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त करने के लिए कौन-कौन से काम किये जायें और कैसे तथा कब किये जायें, इन सारी बातों को नेता ही निर्धारित करता है। प्रजातांत्रिक या लोकतांत्रिक नेता योजना बनाते समय समूह के सदस्यों से सुझाव मांगता है और उसपर अमल करता है। वह प्राय: समूह के बहुमत के अनुसार ही योजनायें बनाता है। दूसरी ओर सत्तावादी नेता के लिए यह आवश्यक नहीं है। वह सदस्यों के सुझाव पर ध्यान दे भी सकता है और नहीं भी।

7.6.3 नीति निर्माता के रूप में नेता

नेता अपने समूह की नीतियों का बनाने वाला होता है। समूह नीति के दो प्रकार हैं– आंतरिक नीति तथा बाह्य नीति। इन दोनों प्रकार की नीतियों का निर्माण तीन तरह से होता है :

(क) कभी-कभी शीर्ष नेता नीति बनाता है और अधीनस्थ उसे स्वीकार कर लेते हैं। जैसे- किसी बड़े संगठन का शीर्ष नेता नीति बनाता है और इसकी सूचना जिला स्तरों के नेतओं या सदस्यों को दे दी जाती है। उल्लेखनीय है कि नीति का निर्माण ऊपर से होने के बावजूद निचले स्तरों के नेताओं से परामर्श प्राय: लिया जाता है।

(ख) कभी-कभी समूह के सदस्यों के सामूहिक निर्णय में भाग लेता है। यह बात प्रजातांत्रिक नेतृत्व में देखी जाती है।

(ग) कभी-कभी नेता स्वयं नीति बनाता है और सदस्यों से परामर्श लेना आवश्यक नहीं समझा जाता है। यह बात सत्तावादी नेतृत्व में पाई जाती है। स्पष्ट है कि नीति बनाने के स्रोत में भले अन्तर हो, परन्तु इतना सत्य है कि नीति बनाना प्रत्येक नेता का एक महत्त्वपूर्ण कार्य है।

7.6.4 विशेषज्ञ के रूप में नेता

नेता अपने समूह के लिए विशेषज्ञ का काम करता है। राजनीतिक समूह का नेता राजनीति के सम्बन्ध में, धार्मिक समूह का नेता धर्म के सम्बन्ध में तथा डाकुओं के गिरोह का सरदार डकैती के मामले में निपुण तथा विशेषज्ञ होता है। अत: आवश्यकता महसूस होने पर समूह के सदस्य अपने नेता से ही मार्ग-दर्शन मांगते हैं। विश्वास किया जाता है कि नेता को अपने समूह की समस्याओं के समाधान का सबसे अधिक तकनीकी ज्ञान होता है कि यह बात सत्तावादी नेता प्रजातांत्रिक नेता के लिए अधिक महत्त्वपूर्ण है। इसी कारण नेता का प्रभाव सदस्यों पर बना रहता है।

7.6.5 समूह-प्रतिनिधि के रूप में नेता

नेता अपने समूह का प्रतिनिधित्व दूसरे समूहों के प्रसंग में करता है। प्रत्येक समूह का सम्बन्ध दूसरे समूहों से होता है। नेता ही इस सम्बन्ध को निर्धारित करता है। एक समूह का सम्बन्ध दूसरे समूह के साथ कैसा होगा, इसको नेता ही निर्धारित करता है। अपने समूह तथा दूसरे समूहों के बीच आदान-प्रदान का माध्यम नेता ही होता है। इसलिए लेविन ने कहा है कि नेता अपने समूह का दरवान होता है। नेता का यह कार्य सत्तावादी तथा प्रजातांत्रिक समूहों में समान रूप से महत्त्वपूर्ण है।

7.6.6 आंतरिक सम्बन्धों के नियंत्रक के रूप में नेता

नेता अपने समूह के सदस्यों के आपसी सम्बन्धों को निर्धारित तथा नियंत्रित करता है। वह अपने सदस्यों के बीच सम्बन्ध बेहतर बनाने का प्रयास करता है। यह कार्य प्रजातांत्रिक नेतृत्व में अधिक प्रधान होता है। लेकिन, सत्तावादी नेतृत्व में यह कार्य गौण होता है। सच तो यह है कि सत्तावादी नेतृत्व में नेता सदस्यों के बीच अलगाव बनाये रखता है।

7.6.7 पुरस्कार तथा दण्ड के प्रबन्ध के रूप में नेता

नेता अपने समूह के अन्तर्गत सदस्यों को पुरस्कार या दण्ड देने का भी काम करता है। जो सदस्य समूह लक्ष्यों को प्राप्त करने में सहायक होता है, उसको नेता पुरस्कार देता है। पुरस्कार के रूप में उसे नया पद दिया जाता है, पदोन्नति कर दी जाती है या प्रशंसा की जाती है। दूसरी ओर जो सदस्य समूह लक्ष्यों को प्राप्त करने के मार्ग में बाधा डालता है अथवा अपने निर्धारित कार्य को पूरा करने में असफल होता है, उसे नेता दण्ड देता है। दण्ड के रूप में उसे पद से हटा दिया जाता है, पदावनति कर दी जाती है या निन्दा की जाती है। नेता अपने इसी अधिकार या शक्ति के बल पर सदस्यों को नियंत्रित करने में सफल होता है। प्रजातांत्रिक समूह में किसी सदस्य को मिलने वाले पुरस्कार या दण्ड के संबंध में नेता से पूछ ताछ की जा सकती है। लेकिन, सत्तावादी समूह में नेता को कारण बताने के लिए नहीं कहा जा सकता है।

7.6.8 पंच तथा मध्यस्थ के रूप में नेता

नेता अपने समूह में पंच तथा मध्यस्थ के रूप में काम करता है। कभी कभी समूह के कुछ सदस्यों के बीच अनबन हो जाती है और वे आपस में संघर्ष करने लगते हैं। ऐसी परिस्थिति में नेता पंच का काम करके उनके बीच समझौता करा देता है। वह संबंधित सदस्यों की बातों को सुनता है, उनके आपसी झगड़ों के कारणों की जाँच करता है और अपना निर्णय देकर झगड़े समाप्त कर देता है। सत्तावादी समूह में नेता का यह कार्य गौण होता है।

7.6.9 आदर्श के रूप में नेता

विभिन्न समूहों में नेता एक आदर्श का काम करता है। वह अपने समूह के आदर्शों पर पूरा पूरा अमल करता है। इस प्रकार वह अपने सदस्यों के लिए उदाहरण का काम करता है। जैसे-किसी धार्मिक समूह का नेता अपने धार्मिक नियमों पर पूरा पूरा अमल करता है। धर्म के मामले में वह दूसरे सदस्यों के लिए आदर्श या उदाहरण बन जाता है। हजरत मुहम्मद को मुस्लिम समुदाय में धर्म के मामले में आदर्श माना जाता है। उल्लेखनीय है कि सत्तावादी नेता का यह कार्य

गौण होता है।

7.6.11 व्यक्तिगत उत्तरदायित्व के लिए स्थानापन्न के रूप में नेता

नेता का एक कार्य यह है कि वह सदस्यों के व्यक्तिगत उत्तरदायित्व को अपने कन्धे पर ले लेता है। जब जटिल परिस्थितियों में सदस्य अपनी जिम्मेदारी को निभाने तथा निर्णय करने में कठिनाई महसूस करते हैं या कतराते हैं तो नेता उनकी जिम्मेदारी को अपने ऊपर लेकर कोई निर्णय स्वंय करता है, जिससे सदस्यों की चिन्ता दूर हो जाती है और राहत महसूस होती है। इस संबंध में फ्रौम (1941) का अध्यन महत्वपूर्ण है। उनके अनुसार नेता का यह कार्य वास्तव में काफी कठिन है। निलसन (1971) का अध्ययन भी इस संदर्भ में महत्वपूर्ण है।

7.6.12 सिद्धांतवादी के रूप में नेता

नेता अपने समूह में सिद्धांतवादी का काम करता है। प्रत्येक समूह का एक विशेष सिद्धांत होता है। नेता उस पर पूरा अमल करता है। वह अपने समूह के मूल्यों, प्रतिमानों तथा विश्वासों के अनुकूल व्यवहार करता है और अन्य सदस्यों को भी इसकी प्रेरणा देता है। नेता के इस व्यवहार का निश्चित प्रभाव सदस्यों पर पड़ता है और वे भी इसी तरह के व्यवहार करने के लिए प्रेरित हो उठते हैं। यह बात विशेष रूप से प्रजातांत्रिक समूह में अधिक देखी जाती है।

7.6.13 पिता तुल्य के रूप में नेता

नेता अपने समूह में पिता के समान भूमिका अदा करता है। संवेगात्मक भूमिका के दृष्टिकोण से जो स्थान पिता का परिवार में होता है, वही स्थान नेता का समूह में होता है। समूह में सदस्यों के सकारात्मक संवेगाम्तक भावों के लिए नेता एक पूर्ण केन्द्र का काम करता है। ऐन्सबेकर (1948) के अनुसार जब नेता सदस्यों की इन संवेगात्मक आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं करता है तो वे अपने नेता को इसके लिए कभी कभी बाध्य करते हैं। नेता का यह कार्यात्मक पक्ष प्रजातांत्रिक समूह में विशेष रूप से प्रधान होता है।

7.6.14 बलि के बकरे के रूप में नेता

कभी कभी नेता बलि के बकरे के रूप में काम करता है। इसका अर्थ यह है कि जब समूह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल हो जाता है तो इसकी पूरी जिम्मेदारी नेता पर थोप दी जाती है और उसकी निन्दा की जाती है। समूह के सदस्यों को निराशा होती है तो वे नेता के प्रति आक्रमणशील व्यवहार करने लगते हैं। नेता को पद से हटा दिया जाता है या हत्या कर दी जाती है। प्रजातांत्रिक नेतृत्व में नेता को प्रायः पद से हटा दिया जाता है, जबकि सत्तावादी नेतृत्व में हत्या कर दी जाती है। महात्मा गाँधी, श्रीमती इन्दिरा गाँधी, श्री भुट्टो,, श्री शेख मुजीबुर्रहमान, आदि की हत्या इसके उज्ज्वल उदाहरण हैं।

7.6.15 समन्वयक के रूप में नेता

नेता का एक मुख्य कार्य यह है कि वह समूह की भिन्न भिन्न क्रियाओं के बीच समन्वय स्थापित करता है। यह देखना नेता का उत्तरदायित्व है कि वह अपने समूह के उद्देश्यों को प्राप्त करने का प्रयास करे। वह कम से कम समय में तथा कम से कम खर्च में अपने समूह लक्ष्यों को पूरा करने का प्रयास करता है। वह उप समितियों का निर्माण करता है ताकि समूह के उद्देश्यों या लक्ष्यों को आसानी से प्राप्त किया जा सके। लेकिन, वह सभी उप समितियों के समन्वय कायम रखने का प्रयास करता है। सामाजिक आंदोलन के समय नेता का यह कार्य काफी महत्वपूर्ण बन जाता है। इसलिए इस संदर्भ में अधिक शोधकार्य किये गये हैं।

इस प्रकार स्पष्ट है कि नेता के उपर्युक्त कई कार्य हैं। इस संबंध में दो बातें उल्लेखनीय हैं। पहली बात यह है कि क्रम संख्या 1 से 8 तक के कार्यों को प्राथमिक कार्य तथा शेष कार्यों अर्थात् क्रम संख्या 9 से 15 तक के कार्यों को

सहायक कार्य कहते हैं। प्राथमिक कार्य ऐसे कार्यों को कहते हैं, जो नेतृत्व के लिए अनिवार्य है और सहायक कार्य ऐसे कार्यों को कहते हैं जो नेतृत्व के लिए समूह द्वारा निर्धारित किये जा सकते हैं। दूसरी बात यह है कि यद्यपि प्रत्येक नेतृत्व में उपर्युक्त सभी कार्य देखे जाते हैं, फिर भी प्रत्येक कार्य के महत्व की मात्रा तथा कार्य करने के ढंग में नेतृत्व प्रकार या समूह प्रकार के अनुकूल अन्तर होता है। अनौपचारिक तथा अस्थाई समूहों में उपर्युक्त बहुत से कार्य नहीं देखे जाते हैं जबकि परिवार, राजनीतिक दल, व्यवसाय संगठन, आदि औपचारिक तथा अपेक्षाकृत स्थाई समूहों में ये सभी कार्य देखे जा सकते हैं।

7.7 नेतृत्व प्रशिक्षण

नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ : नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ है नेतृत्व शिक्षा। यह प्रशिक्षण या शिक्षा दो अभिधारणाओं पर आधारित है :

(क) प्रजातंत्र में प्रत्येक व्यक्ति नेता हो सकता है, यदि उसे अनुकूल परिस्थिति मिल जाए।

(ख) नेता जन्मजात नहीं होता है, बल्कि परिस्थिति द्वारा बनाया जाता है। अत: नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ है नेता को नेतृत्व से संबंधित आवश्यक सूचनाओं से अवगत करा देना। हुलियालकर आदि (1956) के अनुसार नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ विभिन्न विशेषताओं की शिक्षा देना है यथा समूह के सदस्यों तथा उनकी संस्कृति के संबंध में जानकारी देना, प्रजातांत्रिक प्रविधियों का विशिष्ट ज्ञान देना, विशेष समय में साहस का परिचय देना, समूह के ऐसे सदस्यों को सम्मान देना जो अपने दायित्व को अच्छी तरह निभाते हैं, तथा सभी परिस्थितियों में संवेगात्मक आत्म नियंत्रण को कायम रखना। अत: हम कह सकते हैं कि "नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ नेतृत्व क्रियाओं की क्रमबद्ध श्रृंखला है- निर्देशन, अभ्यास, मूल्यांकन, परीक्षा, आदि जिसके प्रति प्रशिक्षण लेने वाले व्यक्ति का अधिकरण होता है।"

7.8 नेतृत्व प्रशिक्षण की आवश्यकता

नेतृत्व प्रशिक्षण की आवश्यकता या महत्व को निम्नलिखित संदर्भों में देखा जा सकता है :

(1) लोकतंत्र में नेता के प्रशिक्षण या शिक्षा का महत्वपूर्ण स्थान होता है। नेता को इस बात की जानकारी होना आवश्यक है कि समूह के प्रति उसके अधिकार तथा कर्तव्य क्या हैं। विदेशों में किये गये अध्ययनों से पता चलता है कि प्रशिक्षित तथा अनुभवी नेता प्रजातांत्रिक व्यवस्था को समुचित ढंग से चलाने में अधिक सफल होता है।

(2) व्यवसाय या व्यापार के क्षेत्र में भी नेतृत्व प्रशिक्षण का महत्व देखा जा सकता है। व्यापार संगठन में पर्यवेक्षक, फोरमैन या मैनेजर को अपने संगठन के सदस्यों के संबंधों में पूरी जानकारी होनी चाहिए। उन्हें अपने सदस्यों की धार्मिक तथा सांस्कृतिक विशेषताओं से अवगत होना चाहिए। उन्हें उनके साथ मानवीय संबंध स्थापित करना चाहिए। इन सबके लिए प्रशिक्षण आवश्यक है।

(3) शिक्षा के खेत्र में भी नेतृत्व प्रशिक्षण की आवश्यकता महसूस होती है। शैक्षिक नेता को अपने छात्रों के संबंध में पूरी जानकारी होना आवश्यक है और तभी शिक्षा का उद्देश्य पूरा करना संभव हो सकेगा।

(4) सरकारी दफ्तरों में भी नेतृत्व प्रशिक्षण का महत्व देखा जाता है। प्रशासकों तथा पदाधिकारियों के लिए प्रशिक्षण बहुत आवश्यक है और तभी वे इस बदली हुई परिस्थिति में अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के साथ अभियोजन स्थापित करने तथा अपने दायित्व को निभाने में सफल हो सकेंगे।

(5) आधुनिक युग में सेना पदाधिकारी के लिए भी प्रशिक्षण आवश्यक प्रतीत होता है। क्रेच एवं क्रचफिल्ड (1984) के अनुसार सेना पदाधिकारी को भी प्रशिक्षित होना आवश्यक है ताकि वह समुचित रूप से अपने

उद्देश्यों का प्राप्त कर सके।

नेतृत्व पुनः प्रशिक्षण में बाधायें : किसी भी संगठन में नेतृत्व के पुनः प्रशिक्षण में कई प्रकार की बाधायें या कठिनाइयाँ उत्पन्न हो सकती हैं :

(1) नेता इस बात को महसूस नहीं कर सकता है कि उसे प्रशिक्षण की आवश्यकता है, यदि उसका समूह अपने लक्ष्यों को प्राप्त करने में असफल हो तो भी वह इसके लिए अपने आपको अक्षम तथा उत्तरदायी मानने को तैयार नहीं भी हो सकता है। ऐसी हालत में उसका प्रशिक्षण कठिन बन जाता है।

(2) नेता यह महसूस कर सकता है कि समूह की तमाम नीतियों या योजनाओं में सदस्यों को भाग लेना आवश्यक नहीं है। शिक्षक, माता पिता, सर्वेक्षक, आदि के पुनर्प्रशिक्षण में यह एक बहुत बड़ी बाधा है।

(3) नेता प्रशिक्षण का गलत अर्थ लगा सकता है। यदि वह सचमुच अक्षम हो तो पुनर्प्रशिक्षण द्वारा वह अपनी कमजोरी को जाहिर होने देना नहीं चाहेगा अथवा वह असुरक्षा के प्रभाव से प्रभावित होकर पुनर्प्रशिक्षण के लिए तैयार नहीं होगा।

(4) नई नेतृत्व भूमिका में कौशलों का होना अपेक्षित हो, वे उस नेता में नहीं भी हो सकते हैं। ऐसी हालत में वह पुनर्प्रशिक्षण के लिए तैयार नहीं होगा। उसे भय हो सकता है कि वह नये परिवेश में सफल प्रमाणित नहीं होगा।

इस प्रकार स्पष्ट है कि उपर्युक्त परिस्थितियों में पुनर्प्रशिक्षण कठिन बन जाता है। कई अध्ययनों से इस विचार का समर्थन होता है।

7.9 नेतृत्व प्रशिक्षण की प्रविधियाँ

नेता के प्रशिक्षण के लिए निम्नलिखित विधियों का व्यवहार किया जा सकता है :

(1) **भाषण विधि :** इस विधि में नेता को एक विशेष स्थान तथा समय पर उपस्थित होना पड़ता है, जहाँ विशेषज्ञ नेतृत्व के विभिन्न पक्षों से संबंधित आवश्यक सूचनायें भाषण द्वारा देता है। यहाँ नेता निष्क्रिय रूप से विशेषज्ञ की बातों पर ध्यान देता है तथा जानकारी हासिल करता है। आवश्यकतानुसार नेता को कई बार इसमें भाग लेना पड़ता है। लेकिन, यह विधि नेताओं के प्रशिक्षण में अधिक सफल नहीं है। विशेष रूप से तीव्र बुद्धि के नेताओं के लिए यह उपयोगी नहीं है। इसी प्रकार बहिर्मुखी तथा विवेकशील नेताओं के प्रशिक्षण के लिए यह उपयुक्त नहीं है। केवल मन्द बुद्धि के अन्तर्मुखी नेताओं के प्रशिक्षण में इससे लाभ हो सकता है।

(2) **विवेचन विधि :** इस विधि में नेता तथा विशेषज्ञ आपस में मिल कर नेतृत्व के संबंध में विवेचन करते हैं। सफल नेतृत्व के लिए अपेक्षित विशेषताओं पर विवेचन किया जाता है। इसका संचालन विशेषज्ञ करता है। इस प्रकार नेता सफल नेतृत्व के लिए अपेक्षित बातों से अवगत हो जाता है। यह विधि भाषण विधि की अपेक्षा नेतृत्व प्रशिक्षण के लिए अधिक सफल है। इसमें प्रशिक्षण लेने वाले नेता सक्रिय रहते हैं तथा नीरसता से बचे रहते हैं। अन्तर्मुखी या मन्द बुद्धि के नेताओं के प्रशिक्षण के लिए यह अधिक उपयोगी नहीं है।

(3) **समस्या विवेचन विधि :** यह विधि विवेचन विधि के समान है। अन्तर केवल इतना है कि यहाँ एक विशेष समस्या होती है, जिसके संबंध में नेता तथा विवेचन करते हैं। समस्या का संबंध नेतृत्व से प्रत्यक्ष रूप से होता है। मानव संबंधों को उन्नत बनाने की दृष्टि से यह विधि अधिक उपयोगी है। इसके अतिरिक्त इसमें वे सारे गुण पाये जाते हैं, जिनका उल्लेख विवेचन विधि में हो चुका है।

(4) **भूमिका निर्वाह विधि :** यह विधि इस विश्वास पर आधारित है कि जो बात करके सीखी जाती है वह अधिक उपयुक्त तथा टिकाऊ होती है। अतः इस विधि में नेता को एक विशेष भूमिका निभाने के लिए कहा जाता है। प्रत्येक भूमिका के कुछ निश्चित कर्तव्य तथा अधिकार होते हैं। इस प्रकार नेता को भिन्न भिन्न भूमिकाओं के अधिकारों तथा

कर्तव्यों को सीखने का मौका मिलता है। भूमिका निभाते समय व्यावहारिक कठिनाइयाँ महसूस होती हैं, जिनके समाधान हेतु नेता को सीखने का अवसर मिलता है। यह गुण भाषण विधि या विवेचन विधि में नहीं है। लिपिट (1945), सियर्स आदि (1991) के अनुसार पर्यवेक्षक के प्रशिक्षण के लिए यह विधि काफी उपयोगी है। इसी प्रकार प्रशासक प्रिंसिपल, मैनेजर आदि के प्रशिक्षण के लिए इस विधि की उपयोगिता बहुत अधिक है।

7.10 सारांश

नेतृत्व की परिभाषा, स्वरूप, उदभव, प्रकार एवं कार्य की चर्चा विस्तारपूर्वक की जा चुकी है। यहाँ आपको उसका सारांश प्रस्तुत किया जाएगा :

(1) नेतृत्व की परिभाषा को कई दृष्टिकोण से व्यक्त किया गया है। व्यक्तिगत विशेषताओं पर आधारित परिभाषाओं के अनुसार नेतृत्व का तात्पर्य व्यक्ति की मौलिक योग्यता से है, जिसके द्वारा नेता दूसरे के विचारों, व्यवहारों को बदलने का प्रयास करता है। समूह विशेषताओं पर आधारित परिभाषा के अनुसार, नेतृत्व एक समूह प्रक्रिया है जिसके द्वारा नेता को समूह में केन्द्रीय स्थान प्राप्त होता है। प्रभावशाली व्यवहार की परिभाषाओं के अनुसार नेतृत्व एक प्रक्रिया है जिसके द्वारा एक व्यक्ति दूसरे के व्यवहार को प्रभावित करता है। अन्तर्वैयक्तिक प्रभाव पर आधारित परिभाषा का मानना है कि नेतृत्व एक व्यक्ति से अन्य व्यक्तियों के बीच का अन्तर्वैयक्तिक संबंध है।

(2) नेता के उस व्यक्तिगत शीलगुण या विशेषताएँ होती हैं, जिसके चलते उनमें प्रभावशली नेतृत्व देखा जाता है। ये शीलगुण हैं- बुद्धि, शब्दाडम्बर, आत्मविश्वास, बहिर्मुखता, सत्तावादिता, प्रभुता, आत्म संस्थापन, संवेगात्मक स्थिरता, अभियोजन, परानुभूति, चमत्कार एवं आत्म प्रत्यक्षीवृत दुर्बलताएँ। उपर्युक्त व्यक्तित्व शीलगुण के कारण कोई व्यक्ति प्रभावशाली नेता का रूप ले लेता है। इसके अतिरिक्त अर्जित शीलगुण भी नेतृत्व को प्रभावित करता है, जैसे- समूह स्थिति, परिवार में स्थान इत्यादि।

(3) नेतृत्व के उदभव संबंधित दो तरह के सिद्धांमत महत्वपूर्ण हैं, जिन्हें महान मानव सिद्धांत तथा समय या परिस्थिति सिद्धांत के नाम से जाना जाता है। प्रथम सिद्धांतानुसार नेता अपने शीलगुण के अनुसार जन्मजात होता है। ये शीलगुण मुख्यत: तीन प्रकार के होते हैं, जिन्हें शारीरिक शीलगुण, व्यक्तिगत शीलगुण तथा अर्जित शीलगुण कहा जाता है। इस सिद्धांत का मानना है कि नेतृत्व इन्हीं तीनों शीलगुणों का नाम है। द्वितीय सिद्धांत के अनुसार, नेतृत्व समूह परिस्थिति का परिणाम होता है जिनके महत्वपूर्ण कारक, समूह का आकार, समूह संकट, समूह और स्थिरता, समूह की आवश्यकताएँ, नेता की आवश्यकताएँ तथा वर्तमान नेता की असफलता को लिया जा सकता है।

(4) नेतृत्व का वर्गीकरण समाज मनोवैज्ञानिकों ने भिन्न भिन्न प्रकार से किया है। कौनवे के अनुसार, भीड़ सम्मोहक, भीड़ व्याख्याता एवं भीड़ प्रतिनिधि के रूप में नेता को वर्गीकृत किया गया है। इसी प्रकार बार्टलेट ने भी नेता के तीन प्रकार संस्थागत, प्रभावी एवं अनुसारी नेतृत्व का वर्णन किया है। मिंबल यंग के अनुसार नेता सात प्रकार के होते हैं, जैसे- राजनीतिक अधिपुरुष, प्रजातांत्रिक, सुधारक, आंदोलक, नौकरशाही, कूटनीतिज्ञ एवं सिद्धांतवादी। इसी प्रकार सर्जेण्ट का मानना है कि नेता के निम्नलिखित सात महत्वपूर्ण प्रकार है, चमत्कारी नेता, प्रतीकात्मक नेता, प्रधान विशेषता, कार्यकारी, आंदोलक एवं भावपीड़क। लिपिट ने नेतृत्व को तीन भागों में बांटा जिसे सत्तावादी, प्रजातांत्रिक एवं अहस्तक्षेपी कहा जाता है।

(5) प्रजातांत्रिक एवं सत्तावादी नेतृत्व के बीच कई महत्त्वपूर्ण अन्तर हैं, जैसे- सत्तावादी नेता में अपेक्षाकृत निरपेक्ष शक्ति अधिक होती है, अधिकारों का केन्द्रीयकरण देखा जाता है, कार्य अभिमुखीकरण देखा जाता है, नेता

एवं अनुयायियों के बीच सामाजिक दूरी व अमैत्रीपूर्ण व्यवहार देखा जाता है, दमनकारी गुण देखा जाता है, दुर्बल मनोबल पाया जाता है।

(6) नेता के निम्नलिखित महत्वपूर्ण कार्य हैं- कार्यपालक के रूप में योजना निर्माण के रूप में, नीति निर्माता के रूप में, विशेषज्ञ के रूप में, समूह प्रतिनिधि के रूप में, आंतरिक कलह के नियंत्रक के रूप में, प्रबंधक के रूप में, मध्यस्थ के रूप में, आदर्श के रूप में, समूह के प्रतीक के रूप में, पिता के रूप में, समन्वयक के रूप में, बलि के बकरे के रूप में, सिद्धांतवादी के रूप में इत्यादि।

(7) नेतृत्व प्रशिक्षण का अर्थ नेतृत्व शिक्षा है जो दो अभिधारणाओं पर आधारित है। प्रथम अभिधारणा के अनुसार, अनुकूल परिस्थिति में प्रत्येक व्यक्ति नेता हो सकता है और द्वितीय अभिधारणानुसार नेतृत्व परिस्थिति की उपज है। नेतृत्व प्रशिक्षण शिक्षा के दृष्टिकोण से, व्यवसाय के दृष्टिकोण से आवश्यक माना जाता है, जिनकी महत्वपूर्ण प्रविधियाँ भाषण, विवेचन, समस्या विवेचना एवं भूमिका निर्वाह है।

7.11 पाठ में प्रयुक्त शब्द कुंजी

नेतृत्व व्यवहार,	अन्तर्वैयक्तिक प्रभाव,	औपचारिक प्रधान,	व्यक्तित्व शीलगुण,
बुद्धि,	शब्दाडम्बर,	विशेषज्ञ,	बहिर्मुखता,
आत्मविश्वास,	सत्तावादिता,	सहसंबंध,	प्रभुता,
आत्म संस्थापन,	प्रभुता,	अभियोजन,	संवेगात्मक स्थिरता,
युद्धकारी,	अभिलाषा स्तर,	उपलब्धि स्तर,	परानुभूति,
चमत्कार,	अर्जित शीलगुण,	उद्भव,	आविर्भावा,
जन्मजात,	संवेगात्मक नियंत्रण,	अभियोजनशीलता,	उदारता,
लोक सम्मान,	उत्कर्ष उत्तरदायित्व,	समूह संकट,	भीड़ सम्मोहक,
भीड़ व्याख्याता,	भीड़ प्रतिनिधि,	संस्थागत नेता,	प्रभावी नेता,
अनुसारी नेता,	राजनीतिक अधिपुरुष,	प्रजातांत्रिक नेता,	सुधारक,
नौकरशाही,	आन्दोलक,	कूटनीतिज्ञ,	सिद्धान्तवादी,
प्रतीकातत्मक नेता,	कार्यकारी,	प्रशासक,	अत्पीड़क नेता,
सत्तावादी नेता,	कार्य अभिमुखी,	अनुयायी,	दमनकारी,
भाव शून्यता,	सहकारिता,	कैफियत,	मनोबल,
निर्देशक,	अधीनस्थ,	नियंत्रक,	प्रबंधक,
पंच,	मध्यस्थ,	आदर्श,	अहस्तक्षेपी नेतृत्व नीति निर्माता,
स्थानापन्न बलि के बकरे,	समन्वयक,	नेतृत्व प्रशिक्षण प्रविधियाँ।	

7.12 अभ्यास के लिए प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

1. नेतृत्व की परिभाषा दें तथा इसके स्वरूप की व्याख्या करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.1 देखें।

2. नेता के व्यक्तिगत शीलगुण या विशेषताएँ को बताएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.2.1, 7.2.2 देखें।

3. नेतृत्व प्रशिक्षण से आप क्या समझते हैं?

उत्तर : उत्तर के लिए 7.7 देखें।

4. नेतृत्व प्रशिक्षण की आवश्यकता पर नोट लिखें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.8 देखें।

5. नेतृत्व प्रशिक्षण की प्रविधियों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.9 देखें।

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. नेता के उदभव या आविर्भाव संबंधी सिद्धान्तों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.3 से 7.3.2 तक देखें।

2. नेतृत्व के वर्गीकरण या प्रकारों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.4 से 7.4.5 तक देखें।

3. सत्तावादी प्रजातांत्रिक नेतृत्व में अन्तर स्पष्ट करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.5 देखें।

4. नेता के कार्यों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.6 से 7.6.15 तक देखें।

5. नेतृत्व प्रशिक्षण क्या है? इसकी आवश्यकता एवं प्रविधियों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 7.7 से 7.9 तक देखें।

7.13 अध्ययन की अन्य सामग्रियाँ

1. श्रीवास्तव, पांडे एवं सिंह : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
2. तोमर : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
3. एस॰ एस॰ माथुर : समाज मनोविज्ञान
4. डा॰ ए॰ के सिंह : समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा

■

हाव भाव, भाषण, लघु उद्योग वृत चित्र, विश्वजनीन भ्रम प्रविधि,
टेलीविजन, रेडियो, स्थानान्तरण प्रविधि,

8.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

(1) प्रचार के अर्थ को समझाएँ एवं इसकी विशेषताओं का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 8.1 एवं 8.2 देखें।

(2) प्रचार तथा शिक्षा के बीच अन्तर बताएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 8.3 देखें।

(3) प्रचार के माध्यम के रूप में (1) भाषण, (2) समाचार पत्र, (3) सिनेमा (4) टेलीविजन की भूमिका को बताएँ।

उत्तर : उत्तर (1) के लिए 8.6.1 देखें।
(2) के लिए 8.6.2 देखें।
(3) के लिए 8.6.5 देखें।
(4) के लिए 8.6.6 देखें।

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. प्रचार के प्रविधियों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 8.4 से 8.4.9 तक देखें

2. प्रचार के सिद्धांतों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 8.5 से 8.5.11 तक देखें

3. प्रचार के माध्यम, साधन या उपकरणों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 8.6 से 8.6.7 तक देखें

8.10 अन्य उपयोगी अध्ययन सामग्रियाँ

1. डा० ए० के० सिंह : समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा
2. श्रीवास्तव पांडे एवं सिंह : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
3. तोमर : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
4. एस० एस० माथुर : समाज मनोविज्ञान
5. आदि नारायण, एस० पी० : सोसल साईकोलोंजी

■

जनमत

पाठ संरचना

9.1 जनमत का अर्थ
9.2 जनमत की परिभाषा
9.3 जनमत की स्वरूप
9.4 जनमत को प्रभावित करने वाले कारक
- 9.4.1 सामाजिक मापदंड
- 9.4.2 सामाजिक वर्ग
- 9.4.3 घटनाएँ
- 9.4.4 विरोधी दबाव
- 9.4.5 वृहत संदर्भ
- 9.4.6 नेतृत्व
- 9.4.7 नेतृत्व
- 9.4.8 माध्यम पर दबाव
- 9.4.9 आत्मगत निर्धारक

9.5 जनमत के साधन, माध्यम या उपकरण
- 9.5.1 भविष्यवाणी
- 9.5.2 समाचार पत्र
- 9.5.3 पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ
- 9.5.4 रेडियो
- 9.5.5 सिनेमा
- 9.5.6 टेलीविजन
- 9.5.7 इश्तहार

9.6 लोकतंत्र में जनमत की भूमिका
9.7 सारांश
9.8 शब्द कुंजी
9.9 अभ्यास के लिए प्रश्न
- (क) लघु उत्तरीय प्रश्न
- (ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

9.10 अध्ययन की अन्य सामग्रियाँ

9.0 पाठ का उद्देश्य

इस पाठ का पहला उद्देश्य पाठकों को जनमत के अर्थ तथा स्वरूप से अवगत कराना है। इसका दूसरा उद्देश्य जनमत के निर्माण को प्रभावित करने वाले कारकों से पाठकों को अवगत कराना है ताकि जनमत विकास के निर्धारकों से वे अवगत हो सकें। इस पाठ का तीसरा उद्देश्य जनमत के माध्यमों का उल्लेख करना है ताकि पाठकों को इस बात की जानकारी हो सके कि जनमत किन किन माध्यमों से संचारित होता है। इस पाठ का चौथा उद्देश्य जनमत के मापन की विधियों का उल्लेख करके पाठकों को इस बात की जानकारी देनी है कि जनमत का मापन क्यों और कैसे किया जाता है। इसके अलावा लघु उत्तरीयय तथा दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों की सूची देकर पाठकों की उपलब्धि की जाँच करना भी इस पाठ का उद्देश्य है।

9.1 जनमत का अर्थ

जनमत क्या है? ''जनमत'' दो शब्दों से मिलकर बना है - जन तथा मत। अत: जनमत को सही तौर पर समझने के लिए इन दोनों शब्दों को अलग अलग समझना आवश्यक है।

9.1.1 जन क्या है?

''पब्लिक'' शब्द का व्यवहार संज्ञा तथा विशेषण दोनों रूपों में किया जाता है। संज्ञा के रूप में 'पब्लिक'' का अर्थ है सम्पूर्ण समुदाय, राज्य, संस्था, राजनीतिक दल या राष्ट्र। प्रत्येक विषय या समस्या में रुचि रखने वाले व्यक्तियों के मिलने से जो समूह बनता है, उसे ''पब्लिक'' कहते हैं। भिन्न भिन्न राजनैतिक, शैक्षिक या सामाजिक विषयों में रुचि रखने वाले व्यक्तियों के समूह को पब्लिक कहेंगे। अत: व्यक्तियों की सामान्य रुचि के जितने विषय या समस्यायें होंगी, उतने ही जन या पब्लिक बनेंगे। विशेषण के रूप में 'पब्लिक'' का अर्थ है वह जो व्यक्तिगत या निजी न हो, बल्कि सार्वजननिक या सामान्य हो, जो प्रकट या प्रकाशित हो। इन अर्थों में ''पब्लिक'' शब्द का व्यवहार किया जाता है, परन्तु विशेषण के रूप में इसका व्यवहार अधिक किया जाता है।

9.1.2 मत क्या है?

मत का अर्थ है विचार, विश्वास या मनोवृत्ति। लेकिन, मत के दो अपेक्षित गुण हैं जिनके कारण यह साधारण विचार, मनोवृत्ति या तथ्य से भिन्न है। एक तो यह है कि मत वास्तव में मात्रा में विचार या धारणा से अधिक प्रबल या बलवान होता है और प्रमाणित तथ्य या पर्याप्त प्रमाण पर आधारित धनात्मक ज्ञान से कमजोर होता है। दूसरा अपेक्षित गुण यह है कि मत का संबंध वास्तव में विवादग्रस्त विषय से होता है। अत: सभी मत को विचार या विश्वास या मनोवृत्ति कह सकते हैं, परन्तु सभी विचारों, विश्वासों या मनोवृत्तियों को मत नहीं कहेंगे। मत का क्षेत्र अपेक्षाकृत सीमित है।

9.2 जनमत की परिभाषा

जन तथा मत के अर्थ को समझ लेने के बाद जनमत को समझना सरल बन गया है। साधारण अर्थ में जनमत का तात्पर्य जन के मत से है। लेकिन जन के सभी मतों को जनमत नहीं कहेंगे, केवल ऐसे मत या मतों को जनमत कहेंगे, जिनका संबंध किसी विवादग्रस्त समस्या या बिषय से हो। जैसे-श्रीमती इन्दिरा गाँधी की हत्या एक विशेष समुदाय के व्यक्तियों ने की, यह निर्विवाद है। अत: इस घटना के बारे में जन के विचार को जनमत नहीं कहेंगे। लेकिन, आतंकवादियों की खालिस्तान की माँग, एक विवादग्रस्त समस्या है। अत: इसके संबंध में जनता या जन के मत को जनमत कहेंगे। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि जनमत का संबंध एक विशेष समस्या से होता है। एक समय में जो विचार या विश्वास जनमत है वह दूसरे समय में जनमत नहीं भी हो सकता है। इसीलिए किम्बल यंग (1951) ने कहा है कि ''एक विशेष समय में जन द्वारा धारण किये गये मतों को जनमत कहते हैं। इसी तरह डूब ने कहा है कि '' जनमत का तात्पर्य एक ही

सामाजिक समूह के सदस्यों द्वारा किसी समस्या से संबंधित धारण की गयी सार्वजनिक मनोवृत्तियों से है।''

चैपलिन (1975) ने इसे और भी स्पष्ट करने का प्रयास किया है और इसकी दो आवश्यक विशेषताओं पर बल दिया है। एक तो यह है कि जनमत का संबंध जनसमूह के अधिकांश सदस्यों से होता है और दूसरी विशेषता यह है कि जनमत का संबंध एक विशिष्ट विषय या एक से अधिक विषयों से हो सकता है। इन दोनों विशेषताओं को ध्यान में रखते हुए उन्होंने कहा है कि ''जनमत का तात्पर्य विशिष्ट समस्या या समस्याओं के समूह पर जनसंख्या के अधिकांश सदस्यों के मत या मनोवृत्तियों से है।''

उपर्युक्त परिभाषाओं के विश्लेषण से कई बातें स्पष्ट होती हैं :

(!) जनमत सामान्य महत्व के विषयों पर ही बनता है। जो विषय समाज, समुदाय या राष्ट्र के लिए सामान्य महत्व रखता है, उसी के संबंध में जनमत का निर्माण होता है। जिस समस्या या विषय का संबंध किसी एक व्यक्ति या बहुत थोड़े से लोगों से होता है, उस पर जनमत नहीं बनता है।

(2) जनमत का संबंध विवादग्रस्त विषय या समस्या से होता है। जिस विषय या समस्या पर सदस्यों के बीच विवाद नहीं होता है, उस पर जनमत नहीं बनता है।

(3) जनमत एक सामाजिक निर्णय है। यह एक ऐसा निर्णय है जो सार्वजनिक होता है और समाज, समुदाय या राष्ट्र के अधिकांश लोगों द्वारा धारण किया जाता है।

(4) जनमत का संबंध एक समय विशेष से होता है। जिस विषय पर आज जनमत बनता है उस पर कल जनमत नहीं भी बन सकता है।

(5) जनमत के लिए यह भी आवश्यक है कि समाज, समुदाय या राष्ट्र के सदस्य उस समस्या विशेष के प्रति जागरूक एवं सजग हों।

9.3 जनमत का स्वरूप या विशेषतायें

जनमत की परिभाषाओं तथा उनके विश्लेषण से इसका स्वरूप बहुत कुछ स्पष्ट हो चुका है। लेकिन, इसे और भी स्पष्ट करने के लिए निम्नलिखित विशेषताओं पर ध्यान दिया जा सकता है।

9.3.1 विवादग्रस्त विषय

जनमत की एक मुख्य विशेषता यह है कि इसका संबंध किसी विवादग्रस्त विषय या समस्या से होता है। जब समस्या ऐसी होती है कि उसका समाधान कई तरह से संभव होता है तो उस पर जनमत का निर्माण होता है। जब समस्या ऐसी होती है, जिसके समाधान के संबंध में कोई मतभेद नहीं होता है तो उसपर जनमत का निर्माण नहीं होता है। जैसे- साम्प्रदायिक दंगे को रोका जाए, इसके संबंध में कोई विवाद नहीं है। अत: इस विषय पर जनमत नहीं बनेगा। बाबरी मस्जिद का मामला तय हो जाना चाहिए, यह सभी चाहते हैं। अत: इस पर किसी जनमत का निर्माण नहीं होगा। लेकिन, इस मामले को कैसे तय किया जाए- मस्जिद रहने दिया जाए या मंदिर में बदल दिया जाए या सरकार इससे कोई दूसरा मशरफ ले, इस पर काफी मतभेद है। अत: इस विषय पर जनमत का निर्माण होगा। स्पष्ट है कि जनमत का प्रश्न वहीं उठता है, जाहँ समस्या या विषय विवादग्रस्त होता है।

9.3.2 बहुमत

जनमत से हमेशा बहुमत का बोध होता है। जब किसी विषय के पक्ष में या विपक्ष में अधिकांश लोगों का विचार या निर्णय होता है तो इसे जनमत कहते हैं। चैलिन (1975) ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि जनमत का तात्पर्य जनसंख्या के बड़े खण्ड के मत या मनोवृत्ति से है। पार्क (1913) के अनुसार किसी विषय पर समाज, समुदाय या राष्ट्र के प्रत्येक व्यक्ति का मत एक हो तो उसे जनमत नहीं कहेंगे। जैसे- भारत की जनता का एक मत है कि श्रीमती इन्दिरा गाँधी की

हत्या अनुचित थी। अतः इस एकमत को जनमत नहीं कहेंगे। दूसरी ओर स्वर्ण मंदिर पर सैनिक कार्यवाही न्यायसंगत थी या नहीं, इस विषय पर लोगों में मतभेद है। अधिकांश लोग इसे न्यायसंगत मानते हैं और कुछ लोग इसे न्यायसंगत नहीं मानते हैं। अतः यहाँ अधिकांश लोगों के विचार या मत को जनमत कहेंगे।

9.3.3 विवेकशीलता

जनमत के विवेकशीलता का गुण पाया जाता है। चूँकि जनमत जनसंख्या के अधिकांश सदस्यों के विचारों पर आधारित होता है, इसलिए इसके विवेकशील होने की संभावना अधिक होती है। पी०टी० यंग ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि विवेकपूर्ण सार्वजनिक विवेचन के बाद ही जनमत बनता है।

लेकिन, कुछ विद्वानों का कहना है कि जनमत में अविवेकशीलता का गुण पाया जाता है। अधिकांश लोगों के मिलने से एक भीड़ की सी स्थिति उत्पन्न हो जाती है और विवेकशक्ति तथा तर्कशक्ति घट जाती है और संकेतशीलता बढ़ जाती है। ऐसी हालत में जो निर्णय लिया जाता है वह बहुधा विवेकहीन बन जाता है। यद्यपि कुछ विशेष परिस्थितियों में जनमत में विवेकहीनता का लक्षण पाया जाता है, फिर भी अधिकांश परिस्थितियों में विवेकशीलता का गुण देखा जाता है।

9.3.4 विशिष्ट समय

जनमत का संबंध एक विशिष्ट समय से होता है। जनमत की इस विशेषता पर बल देते हुए किम्बर्न यंग (1951) ने कहा कि एक विशेष समय में जनता द्वारा धारण किये गये विचार को जनमत कहते हैं। कारण, समय तथा स्थान के साथ जनमत बदलता रहता है। भारत में 1975 के आपातकाल के पूर्व का जनमत कांग्रेस (ई) के पक्ष में था और बाद में विपक्ष में बन गया। फिर 1985 में भारतीय जनमत कांग्रेस के पक्ष में था और 1989 में विपक्ष में बन गया। फिर 1991 में जनमत कांग्रेस के पक्ष में बन गया तथा 1996 में विपक्ष में बन गया।

9.3.5 गत्यात्मकता

जनमत में गत्यात्मकता या परिवर्तनशीलता की विशेषता पाई जाती है। कई कारणों से जनमत बदलता रहता है। प्रचारक के प्रचार के कारण जनमत में परिवर्तन संभव होता है। इसी प्रकार किसी विशेष घटना के घटित होने के कारण जनमत बदल जाता है। भारत में आपातकाल के पहले और बाद में इंदिरा शासन के प्रति जनमत में भारी परिवर्तन देखा गया। इसी प्रकार बाबरी मस्जिद के ध्वंस होने के बाद कांग्रेस पार्टी के प्रति मुस्लिम जनमत में भारी परिवर्तन देखा गया।

9.3.6 विकासात्मक प्रक्रिया

जनमत वास्तव में विकासात्मक प्रक्रिया का परिणाम होता है। जब कोई ऐसी समस्या उत्पन्न होती है, जिसमें सभी लोगों की रुचि होती है तो उसके समाधान के लिए लोग अपना विचार देने लगते हैं और अन्त में किसी एक विचार के पक्ष में आधे से अधिक लोग हो जाते हैं। उनका यही विचार जनमत कहलाता है। जनमत के विकास या निर्माण में कितना समय लगेगा, यह बात विषय या समस्या के महत्व एवं गंभीरता पर निर्भर करती है। किसी समस्या का स्वरूप ऐसा होता है कि जनमत का निर्माण जल्दी हो जाता है। जैसे- श्रीमती इंदिरा गाँधी की हत्या के कारण श्री राजीव गाँधी तथा कांग्रेस (ई) के पक्ष में जनमत का निर्माण जल्दी ही हो गया। दूसरी ओर किसी समस्या या विषय का स्वरूप ऐसा होता है कि जनमत के निर्माण में बहुत समय लगता है। जैसे- देश की आर्थिक और सामाजिक समस्याओं के समाधान के लिए साम्यवाद के पक्ष में जनमत के निर्माण में एक लम्बा समय लग चुका है और कुछ और लगेगा।

9.3.7 सामूहिक व्यवहार

जनमत का संबंध व्यक्तिगत व्यवहार से नहीं, बल्कि सामूहिक व्यवहार से होता है। व्यक्ति के कुछ व्यवहार व्यक्तिगत होते हैं जिनका नियंत्रण जनमत के माध्यम से नहीं होता है और कुछ व्यवहार सामूहिक होते हैं जिनका नियंत्रण

जनमत के माध्यम से होता है। यही कारण है कि जनमत का विरोध करने वाले की निन्दा की जाती है।

9.3.8 सामाजिक एवं राजनैतिक अनुशासन

जनमत वास्तव में सामाजिक एवं राजनैतिक अनुशासन पर आधारित होता है। जनमत की सफलता के लिए सामाजिक तथा राजनीतिक अनुशासन आवश्यक है। जनमत का अर्थ है बहुमत। अत: बहुमत वालों का यह नैतिक दायित्व है कि वे अल्पमत वालों के हित की रक्षा करें। इसी तरह अल्पमत वालों का यह दायित्व है कि वे बहुमत वालों के कार्यक्रमों का समर्थन करें। इस पारस्परिक सहयोग के बिना जनमत निरर्थक ही रहेगा। हरिजनों के लिए आरक्षण के पक्ष में अधिकांश लोगों के होने के कारण सरकार ने इसे लागू कर दिया, लेकिन कुछ इसके विपक्ष में ही रहे। फिर भी लागू हो जाने पर विपक्ष में रहने वालों ने भी इसे स्वीकार किया। अत: जनमत की सार्थकता तभी सिद्ध होती है जबकि बहुमत तथा अल्पमत दोनों के बीच पारस्परिक सहयोग होता है।

9.3.9 विचार, वाणी तथा कार्य की स्वतंत्रता

जनमत के लिए यह बहुत आवश्यक है कि समाज, समुदाय या देश के लोगों को किसी समस्या या विषय पर विचार करने, बोलने तथा व्यवहार करने की स्वतंत्रता प्राप्त हो। इस स्वतंत्रता के बिना जनमत का निर्माण संभव नहीं है। चूँकि यह सुविधा प्रजातंत्र में ही संभव है, इसलिए जनमत का विशुद्ध रूप प्रजातांत्रिक व्यवस्था में ही देखा जाता है। सत्ताधारी व्यवस्था में शुद्ध जनमत संभव नहीं है।

9.3.10 विश्वास की तीव्रता

जनमत की विशेषता की चर्चा करते हुए लौरेन्स लोवेल ने कहा कि जनमत का मापदण्ड केवल व्यक्तियों की संख्या नहीं है, बल्कि उनके विश्वासों की तीव्रता भी है। यदि किसी समुदाय के 49% लोग एक विषय के पक्ष में अधिक प्रबल विश्वास या विचार रखते हों, और 51% लोग उस विषय के संबंध में निरुत्साह हों, तो अल्पमत होते हुए भी 49 % लोगों का जनमत अधिक शक्तिशाली तथा प्रभावपूर्ण होगा और वही अन्त में सफल होगा। इसके अलावा जनमत की प्रभावशीलता इस बात पर भी आधारित है कि उसके धारण करने वाले लोगों का व्यक्तित्व कितना प्रभावशाली है। इसलिए, लोवेल ने कहा है कि, "बहुमत के जनमत का तात्पर्य संख्यात्मक बहुमत से नहीं है, बल्कि प्रभावशाली बहुमत से है।

इस प्रकार यह स्पष्ट हुआ कि जनमत का स्परूप काफी जटिल है और इसकी उपर्युक्त कई विशेषताएँ हैं। इन विशेषताओं के आधार पर यह (जनमत) कई सम्बद्ध, प्रत्ययों जैसे, मनोवृत्ति, विश्वास, विचार, आदि से भिन्न बन जाता है।

9.4 जनमत को प्रभावित करने वाले कारक

जनमत बना बनाया नहीं होता है, बल्कि व्यक्ति द्वारा तैयार किया जाता है। किसी विषय या समस्या पर व्यक्तियों द्वारा जनमत का निर्माण किया जाता है। इसके निर्माण में चार अवस्थायें निहित होती हैं- समस्या का उत्पन्न होना, समस्या पर विचार विमर्श करना, विकल्पी समाधानों को प्रस्तुत करना तथा जनमत का प्रकट होना। स्पष्ट है कि जनमत वास्तव में विकासात्मक प्रक्रिया का परिणाम होता है। इस विकासात्मक प्रक्रिया पर कई प्रकार के कारकों का प्रभाव होता है, जिन्हें जनमत के निर्धारक या कारक कहते हैं। इस संदर्भ में निम्नलिखित कारक या निर्धारक अधिक महत्वपूर्ण हैं।

9.4.1 सामाजिक मानदण्ड तथा मूल्य

प्रत्येक समाज के कुछ निश्चित मानदण्ड तथा मूल्य होते हैं। किसी समाज के सदस्यों के विचारों, विश्वासों, मनोवृत्तियों या जनमत पर उनके सामाजिक मानदण्डों तथा मूल्यों का प्रभाव पड़ता है। जैसे- मुस्लिम समाज में चचेरे भाई

बहन के बीच विवाह को मान्यता प्राप्त है, परन्तु हिन्दू समाज में नहीं। अतः इस प्रकार के विवाह के पक्ष में मुसलमानों का जनमत बनेगा जबकि विपक्ष में हिन्दुओं का जनमत बनेगा। इसी तरह भारतीय समाज में समजाति लैंगिकता के विपक्ष में जनमत बनेगा, क्योंकि भारतीय संस्कृति में समजाति लैंगिकता को सामाजिक मान्यता प्राप्त नहीं है। लेकिन, कुछ पाश्चात्य संस्कृतियों में, जहाँ इसे सामाजिक मान्यता प्राप्त है, जनमत पक्ष में बनेगा।

9.4.2 सामाजिक वर्ग

जनमत के निर्माण पर सामाजिक वर्ग का गहरा प्रभाव पड़ता है। आर्थिक स्थिति के आधार पर सम्पूर्ण समाज तीन वर्गों में विभाजित किया जाता है- उच्च वर्ग, मध्य वर्ग तथा निम्न वर्ग, आदि सामाजिक वर्ग हैं। कर्मचारियों में भी किरानी तथा पदाधिकारी के दो अलग अलग सामाजिक वर्ग हैं। वे अपने वर्ग के हित को ध्यान में रखते हुए ही किसी विषय के पक्ष में या विपक्ष में मत देते हैं। जैसे- किसी उद्योग या संगठन में यूनियन के होने के पक्ष में मजदूरों का जनमत बनेगा जबकि पदाधिकारियों का जनमत इसके तथा इसके विपक्ष में पूँजीपति वर्ग या उच्च वर्ग के लोगों में संभवतः जनमत बनेगा। इसी प्रकार भिन्न भिन्न सामाजिक वर्गों का प्रभाव जनमत के निर्माण पर पड़ता है।

9.4.3 घटनायें तथा उनकी व्याख्या

किम्बल यंग (1960) के अनुसार जनमत के निर्माण पर राजनीतिक हत्या, चरित्र हत्या, लूटमार, आदि घटनाओं का प्रभाव पड़ता है। इसके अतिरिक्त इन घटनाओं की व्याख्या किस ढंग से की जाती है, इसका प्रभाव भी जनमत के विकास पर पड़ता ह। उनके शब्दों में "घटनायें जनमत को आवश्यक रूप से प्रभावित करती हैं। उनका केवल घटित होना ही नहीं, बल्कि जिस ढंग से उनकी व्याख्या की जाती है, वह भी महत्वपूर्ण है।"

उदाहरण : 1971 में बंगला देश के स्वतंत्रता संग्राम में इन्दिरा गाँधी ने सराहनीय भूमिका अदा की। इस घटना का प्रभाव यह हुआ कि जनमत उनके पक्ष में बन गया और अगले चुनाव में वे भारी बहुमत से विजयी बन गयीं। लेकिन, आपातकाल के दौरान परिवार नियोजन से संबंधित कुछ ऐसी घटनायें घटीं कि जनमत इंदिरा गाँधी के विरुद्ध बन गया और वे 1977 का चुनाव बुरी तरह हार गयीं। फिर इन्दिरा गाँधी की हत्या ऐसी घटना थी जिसके कारण जनमत उनके पुत्र राजीव गाँधी के पक्ष में बन गया और उन्होंने भारी बहुमत से 1985 का चुनाव जीत लिया। लेकिन बाद में रामजन्म भूमि बाबरी मस्जिद घटना तथा भागलपुर के साम्प्रदायिक दंगे की घटना का परिणाम जनमत पर इतना अधिक पड़ा कि कांग्रेस पार्टी के विपक्ष में जनमत बन गया और इसके परिणामस्वरूप विशेष रूप से उत्तर भारत में पार्टी की करारी हार हो गयी। इन्हीं घटनाओं के कारण हिन्दू जनमत बहुत अंशों में भारतीय जनता पार्टी के पक्ष में बन गया और उस पार्टी की अप्रत्याशित जीत हुई। इस प्रकार स्पष्ट है कि घटनाओं से जनमत बनता है तथा जनमत में परिवर्तन होता है। कभी कभी साधारण घटना भी जनमत बदल देती है या जनमत बना देती है।

9.4.4 विरोधी दबाव

जनमत के निर्माण पर विरोधी दबावों का प्रभाव पड़ता है। यह ठीक है कि व्यक्ति अपने मत का निर्माण स्वयं करता है। लेकिन, यह भी ठीक है कि उसकी कई विरोधी मतों का परिणाम होता है। वह अपने समूहों प्राथमिक तथा द्वितीयक के विरोधी मतों से प्रभावित होकर अपने मत या विचार में परिवर्त्तन, परिमार्जन या संशोधन लाता है। उदाहरण के लिए व्यक्ति के मत या विचार में परिवार, मित्र मण्डली, राजनीतिक दल, आदि का प्रभाव पड़ता है। मान लें कि एक व्यक्ति का मत हरिजनों के लिए आरक्षण के पक्ष में है, परन्तु परिवार के सदस्यों तथा मित्रों का मत इसके विपक्ष में है। इस विरोधी मत से प्रभावित होकर उनका मत भी आरक्षण के विपक्ष में बन जा सकता है। इसी प्रकार भिन्न भिन्न मतों या जनमतों के निर्माण पर विरोधी दबावों का प्रभाव पड़ता है।

9.4.5 वृहत् संदर्भ

यह भी जनमत का एक महत्वपूर्ण निर्धारक है। इसका अर्थ यह है कि व्यक्ति के मत के निर्माण पर अन्तः समूह

के साथ साथ वाह्य समूह का भी प्रभाव पड़ता है। उसके मत पर न केवल उस समूह का प्रभाव पड़ता है, जिसका वह सदस्य होता है, बल्कि उस समूह का भी जिसका वह सदस्य नहीं भी होता है। इसे संदर्भ समूह कहते हैं। इससे पता चलता है कि मत या जनमत का निर्धारण विस्तृत संदर्भ में होता है। उदाहरण के लिए मुसलमानों की एक बहुत बड़ी संख्या मुस्लिम परसनल लॉ के विपक्ष में मत रखती है। इसका एक कारण यह है कि ऐसे मुसलमान इस विषय या समस्या को हिन्दू समाज के संदर्भ में देखते हैं तथा मुस्लिम समाज के व्यापक रूप को सामने रखते हैं। स्पष्ट है कि जनमत के निर्माण पर वृहत संदर्भ का प्रभाव पड़ता है।

9.4.6 नेतृत्व

जनमत का एक महत्वपूर्ण निर्धारक नेतृत्व है। जनमत के निर्माण में समूह के नेता का हाथ होता है। नेता कई रूपों में जनमत को प्रभावित करता है।

(क) नेता ही किसी समस्या को जनता के सामने प्रस्तुत करता है और समस्या के महत्त्व या सार्थकता को उजागर करता है।

(ख) नेता उस समस्या या विषय पर अपना मत देकर समूह के सदस्यों को प्रभावित करता है तथा उसके प्रति रुचि उभारता है।

(ग) नेता के प्रकारों तथा शैलियों का प्रभाव जनमत पर पड़ता है। प्रजातांत्रिक नेता समूह के सदस्यों को मिलाजुला कर अपने मत के अनुसार जनमत बनाने का प्रयास करता है। लेकिन, सत्ताधारी नेता अपने अतिरिक्त बल के आधार पर समूह के सदस्यों को अपने मत के अनुकूल ढालने का प्रयास करता है।

अन्य कारकों की अपेक्षा नेता तथा नेतृत्व प्रकार का प्रभाव जनमत के निर्माण पर अधिक पड़ता है। जैसे- परिवार के प्रचार के विचार का प्रभाव परिवार के अन्य सदस्यों के विचारों पर पड़ता है। इस कारण प्रधान तथा सदस्यों के विचारों या मतों में काफी समानता पाई जाती है। राष्ट्रीय स्तर पर प्रधानमंत्री के विचार या मत का प्रभाव जनता के विचार या मत पर पड़ता है। इस कारण दोनों के विचारों में समानता देखी जाती है। नेता जन माध्यमों जैसे- रेडियो, दूरदर्शन, समाचार पत्र, आदि पर अपना अधिकार जमाकर अपना मत दूसरों पर थोपने में सफल हो जाता है। जैसे- श्री राजीव गाँधी ने जन माध्यमों के सहारे स्वर्ण मन्दिर पर सैनिक कार्यवाही के पक्ष में जनमत बनाने में सफलता प्राप्त कर ली थी।

9.4.7 पूर्वधारणा तथा स्थिराकृति

जनमत के निर्माण पर पूर्वधारणाओं तथा स्थिराकृतियों का गहरा प्रभाव पड़ता है। व्यक्ति किसी विषय की समस्या की वास्तविकता पर ध्यान नहीं देकर अपनी पूर्वधारणा या स्थिराकृति के अनुकूल विचार या मत व्यक्त करता है। जैसे- गो-हत्या के विपक्ष में हिन्दुओं के जनमत बनने का मुख्य कारण उनका धार्मिक पूर्वधारणा या स्थिराकृति है। इसी तरह मुस्लिम परसनल लॉ के पक्ष में मुसलमानों के जनमत होने का प्रधान कारण उनकी धार्मिक पूर्वधारणा या स्थिराकृति है। इसी प्रकार जनमत के विकास पर यौन-पूर्वधारणा, क्षेत्र-पूर्वधारणा, प्रजातीय पूर्वधारणा आदि का निश्चित प्रभाव पड़ता है।

9.4.8 माध्यमों पर दबाव

जनमत के निर्माण में जन माध्यमों का महत्वपूर्ण स्थान है।

समाचार पत्र, रेडियो, टेलीविजन, आदि जनमाध्यम हैं, जिनके द्वारा प्रचार करके जनमत का निर्माण किया जाता है। चुनाव के समय राजनैनिक दलों के नेता भिन्न भिन्न माध्यमों द्वारा जनता को अपने विचारों से प्रभावित करते हैं तथा जनमत को अपने पक्ष में मोड़ने का प्रयास करते हैं। स्वर्ण मंदिर पर सैनिक कार्यवाही के पक्ष में जनमत को बनाने में टेलीविजन ने महत्वपूर्ण भूमिका अदा की।

9.4.9 आत्मगत निर्धारक

जनमत के विकास पर कुछ ऐसे कारकों का प्रभाव पड़ता है, जिनका संबंध व्यक्ति विशेष से होता है। ऐसे कारकों को आत्मगत निर्धारक कहते हैं। उपर्युक्त वाह्य कारकों का प्रभाव जनमत के निर्माण पर किस रूप में पड़ेगा, यह बहुत अंशों में जन या जनसमूह के व्यक्तिगत कारकों पर निर्भर करता है। निम्नलिखित व्यक्तिगत कारक या निर्धारक अधिक महत्वपूर्ण है :

(1) **व्यक्तिगत मूल्य दर्शन :** प्रत्येक व्यक्ति का अपना एक विशेष मूल्य दर्शन होता है, जिसका प्रभाव किसी समस्या से संबंधित उसके मत पर पड़ता है। वाह्य परिस्थितियों के समान रहने पर भी व्यक्ति के मूल्यों में अन्तर होने के कारण किसी विषय या समस्याओं के संबंध में उनके मत भिन्न भिन्न बन जाते हैं। उदाहरण : मान लें कि किसी ब्राह्मण का व्यक्तिगत मत यह है कि भगवान ने सभी मनुष्यों को समान बनाया है। स्पष्टत: उसकी मनोवृत्ति हरिजनों के प्रति अनुकूल होगी और हरिजनों के हित के लिए सरकार द्वारा बनायी जाने वाली योजनाओं के पक्ष में उसका मत होगा। इस व्यक्तिगत मूल्य दर्शन वाले ब्राह्मणों का मत इस योजना या योजनाओं के पक्ष में होगा। दूसरी ओर जिन ब्राह्मणों की व्यक्तिगत मूल्य दर्शन असमानता से संबंधित होगा, उनका मत अवश्य ही हरिजनों के कल्याण हेतु बनायी गयी योजना (जैसे- आरक्षण) के विपक्ष में होगा। स्पष्ट है कि जनमत के निर्माण पर व्यक्तिगत मूल्य दर्शन का प्रभाव पड़ता है।

(2) **प्राप्त सूचना का स्वरूप :** जनमत के निर्माण पर इस बात का प्रभाव पड़ता है कि व्यक्ति द्वारा किसी सार्वजनिक समस्या के संबंध में प्राप्त सूचना का स्वरूप क्या है तथा किस मात्रा में यह प्राप्त है। उदाहरण : स्वर्ण मंदिर पर तत्कालीन इन्दिरा सरकार द्वारा सैनिक कार्यवाही के उपरान्त यह विवाद खड़ा हुआ कि सरकार का यह कदम उचित है या अनुचित। शुरू में बहुमत इस कदम या कार्यवाही के विपक्ष में था। इसका एक मुख्य कारण यह था कि हमें स्वर्ण मंदिर के संबंध में पर्याप्त मात्रा में सही सूचना प्राप्त नहीं थी। जब हमें टेलीविजन, आदि जनमाध्यमों द्वारा सही सूचना पर्याप्त मात्रा में मिली तो बहुमत सैनिक कार्यवाही के पक्ष में हो गया। स्पष्ट हुआ कि सूचना के स्वरूप के अनुकूल जनमत का निर्माण होता है। यह भी ध्यान रखना चाहिए कि सूचना के अभाव में किसी विषय या समस्या पर जनमत नहीं बनता है। कुछ दिन पहले शाहबानों मुकदमा के संदर्भ में सर्वोत्तम न्यायालय ने मुस्लिम परसनल लॉ के खिलाफ फैसला देकर एक सार्वजनिक समस्या उत्पन्न कर दी। लेकिन इस घटना के संबंध में अनपढ़ हिन्दू जनसमूह में संगत सूचना के अभाव के कारण किसी तरह का जनमत नहीं बन सका। टरनर (1986) ने जनमत के विकास में सूचना तथा ज्ञान की भूमिका का उल्लेख करते हुए कहा कि सूचना देने वाले विषय-विशेषज्ञों का भी महत्व होता है। विशेषज्ञ जितना ही अधिक प्रतिष्ठित, कुशल तथा प्रभावशाली होते हैं, उनके द्वारा दी गयी सूचना उतनी ही अधिक प्रभावशाली होती है। तथा उनके अनुकूल जनमत के निर्माण की संभावना भी उतनी ही अधिक होती है।

इस प्रकार हमने देखा कि जनमत के निर्माण या विकास पर उपर्युक्त कई कारकों का प्रभाव पड़ता है। जनमत एक आश्रित चर के रूप में उक्त कई स्वतंत्र चरों का परिणाम होता है। स्मरण रखना चाहिए कि एक ही समय में जनमत के निर्माण पर एक से अधिक कारकों या चरों का प्रभाव पड़ता है।

9.5 जनमत के साधन, माध्यम या उपकरण

जनमत के निर्माण के लिए यह आवश्यक है कि किसी विवादग्रस्त समस्या के संबंध में विचार देनेवाले, उस विचार का प्रचार करने वाले तथा जनसमूह के बीच संपर्क स्थापित किया जाये। छोटे समूहों में यह सम्पर्क आसानी से तथा प्रत्यक्ष रूप से संभव होता है। लेकिन, बड़े समूहों में यह संपर्क जटिल एवं कठिन होता है और प्रत्यक्ष रूप से भी संभव नहीं होता है। इसके लिए कुछ ऐसे माध्यमों की आवश्यकता होती है जिनकी सहायता से विचारदाता, विचार प्रचारक तथा जनता के बीच संपर्क स्थापित किया जा सके तथा जनमत का निर्माण हो सके। माध्यम या साधन जितना ही अधिक अनुकूल तथा प्रभवशाली होता है, जनमत का निर्माण उतना ही जल्दी होता है। आधुनिक युग में निम्नलिखित माध्यमों या

साधनों या उपकरणों का व्यवहार अधिक पाया जाता है।

9.5.1 भाषणंबाजी

जनमत के निर्माण का एक प्रभावशाली साधन भाषणबाजी है। प्रचारक अपने भाषण या व्याख्यान के माध्यम से जनसमूह के विचारों या मतों को प्रभावित तथा नियंत्रित करता है और इच्छित दिशा में मोड़ने का प्रयास करता है। जैसे- चुनाव के समय भिन्न भिन्न राजनैतिक दलों के नेता जनमत को अपने दल तथा अपने उम्मीदवार के पक्ष में बनाने के लिए इस साधन का उपयोग अधिक करते हैं। इसी तरह किसी विशिष्ट साबुन, दवा, आदि के पक्ष में जनमत के निर्माण हेतु भाषण या व्याख्यान का उपयोग प्राय: किया जाता है।

जनमत के निर्माण का यह साधन दूसरे साधनों की अपेक्षा अधिक उपयोगी है। इसमें कुछ ऐसे गुण हैं, जो दूसरे साधनों में नहीं हैं :

(1) भाषण या व्याख्यान अन्य साधनों की अपेक्षा अधिक सरल तथा सहज है। इस माध्यम के द्वारा प्रचारक बहुत आसानी से किसी खास दिशा में जनमत का निर्माण कर सकता है।

(2) इस साधन का क्षेत्र अपेक्षाकृत अधिक व्यापक है। इसके द्वारा शिक्षित, अशिक्षित, अमीर, गरीब सभी लोगों में जनमत का निर्माण संभव होता है।

(3) प्रचारक के लिए यह सुविधा होती है कि वह अपने शारीरिक हाव भाव से जनसमूह को प्रभावति करके जनमत का निर्माण करे।

(4) यहाँ जनसमूह तथा प्रचारक के बीच सीधा संबंध होता है, जिससे जनमत के निर्माण में काफी सुविधा होती है। इन गुणों के होते हुए भी इस साधन का सबसे बड़ा दोष यह है कि यह केवल ऐसे जनसमूह के लिए उपयोगी है जो छोटा तथा सिमटा हुआ हो। बड़े तथा फैले हुए जनसमूह के लिए यह संभव नहीं है और यदि संभव हो भी, तो इसमें अधिक समय लगेगा, अधिक श्रम करना होगा तथा अधिक मुद्रा खर्च करनी होगी।

9.5.2 समाचार पत्र

समाचार पत्रों के माध्यम से भी जनमत का निर्माण किया जाता है। लेख, संपादक के नाम पत्र, संपादकीय, आदि के द्वारा जनसमूह के विचारों या मतों को प्रभावति, नियंत्रित करके एक विशेष दिशा में मोड़ने का प्रयास किया जाता है। परिवार नियोजन या परिवार कल्याण के पक्ष में जनमत को विकसित करने के लिए भिन्न भिन्न अखबारों में विद्वानों के लेख प्रकाशित हुए, दैनिक जीवन की अनुकूल घटनायें प्रकाशित हुई तथा संपादकों ने अनुकूल संपादकीय लिखा, जिसमें काफी सफलता मिली। स्वर्ण मंदिर पर सैनिक कार्यवाही के पक्ष में जनमत के विकास में भी समाचार पत्रों ने अच्छी भूमिका निभाई।

जनता के जनमत के इस साधन में कुछ विशेष गुण पाये जाते हैं :

(1) इसका उपयोग बड़े तथा फैले हुए जनसमूह पर करना संभव है। इसके द्वारा दूर दूर तक के लोगों के मतों को नियंत्रित करना तथा एक खास दिशा में मोड़ना संभव होता है। यह गुण भाषण या व्याख्यान में नहीं है।

(2) इसमें समय, श्रम तथा मुद्रा की बचत होती है।

(3) यहाँ घटनाओं अथवा समस्याओं के अनुसार उन्हें मुख्य पृष्ठ, मध्य पृष्ठ अथवा पिछले पृष्ठ पर, मोटे या महान अक्षरों में छापा जाता है। अत: घटना या समस्या के स्थान तथा छपाई को देखकर उसके महत्व का अंदाजा हो जाता है और उसी के अनुकूल जनमत बनता है।

(4) भारत जैसे स्वतंत्र देश में जनमत के निर्माण का यह काफी महत्वपूर्ण साधन है। अखबार वाले अपने विचार या मत के अनुसार सूचना या घटना छाप कर जनमत का निर्माण बड़े पैमाने पर करते हैं। कुछ अखबार वाले सरकार के पक्ष में जनमत बनाने के लिए अनुकूल सूचनाओं या घटनाओं को आकर्षक बनाकर छापते हैं तथा

विपक्षियों के विरोधी विचारों या मतों को आकर्षणहीन बना कर छापते हैं। कुछ अखबार वाले विपरीत प्रक्रिया अपना कर सरकार के विपक्ष में जनमत बनाते हैं।

(5) भाषण या व्याख्यान की अपेक्षा समाचार पत्र अधिक टिकाऊ साधन है। मार्क्स (1935) के अनुसार जनमत के निर्माण में समाचार पात्र एक महत्वपूर्ण स्थान रखता है।

उपर्युक्त गुणों के बावजूद इसमें दोष भी हैं :

(1) इसका उपयोग केवल शिक्षित व्यक्तियों पर ही संभव है। अशिक्षित व्यक्तियों में जनमत के निर्माण के लिए इसका उपयेग संभव नहीं हैं

(2) सभी शिक्षित व्यक्त्यों के जनमत का निर्माण इस साधन से संभव नहीं होता है। पैसे के अभाव में अथव देहार्ता क्षेत्र होने के कारण अथवा किसी अन्य कारण से सभी लोगों को अखबार उपलब्ध नहीं हो पाते हैं।

(3) यहाँ जनसमूह तथा प्रचारक के बीच सीधा संपर्क नहीं होने के कारण , इसकी प्रभावशीलता भाषण विधि की अपेक्षा घट जाती है।

(4) शारीरिक हाव भाव द्वारा जनसमूह को प्रभावित करना संभव नहीं होता है।

(5) यहाँ श्रोतागण को उत्तेजित तथा संवेगात्मक बनाकर उनके मतों को नियंत्रित करना उतना संभव नहीं है, जितना कि भाषण विधि से है।

समाचार पत्र को एक प्रभावशाली साधन बनाने के लिए किम्बल यंग (1951) ने कई तरह के सुझाव दिये हैं :

(1) संवेगों को उत्तेजित करने वाले शब्द अधिक प्रभावशाली होते हैं यथा आपात, हड़ताल, हत्या, आदि।

(2) युद्ध, साम्प्रदायिक दंगे आदि घटनाओं से संबंधित समाचार की ओर पाठकों का ध्यान अधिक तथा जल्दी जाता है।

(3) प्रेम, यौन, रोमांस, आदि की ओर लोगों में रूचि अधिक होने के कारण ध्यान आसानी से चला जाता है।

(4) नये अनुसंधानों से संबंधित समाचार की ओर हमारा ध्यान अधिक जाता है।

(5) समाचार की प्रभावशीलता इसके स्थान पर भी निर्भर करती है। समाचार पत्र को कोई समाचार कितना प्रभावशाली होगा, यह इस बात पर भी आधारित है कि उसका स्थान पहले पृष्ठ पर है, दूसरे पृष्ठ पर है या अंतिम पृष्ठ पर। इसी प्रकार वह पृष्ठ के ऊपर वाले भाग में है, मध्य भाग में है या निचला भाग में।

9.5.3 पुस्तकें तथा पत्रिकायें

जनमत के विकास या निर्माण में पुस्तकों तथा पत्रिकाओं की भूमिका भी सराहनीय है। पुस्तकों में लेखक पाठकों के विचारों या मतों को अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करते हैं। विनोबा भावे ने पुस्तकों के माध्यम से भूदान के पक्ष में जनमत को अपने अनुकूल बनाने का असफल प्रयास किया। कार्ल मार्क्स ने पुस्तकों के माध्यम से साम्यवाद के पक्ष में जनमत के निर्माण का सफल प्रयास किया। इसी प्रकार पत्रिकाओं के माध्यम से जनमत का निर्माण किया जाता है। रूसी पत्रिकाओं का मुख्य उद्देश्य साम्यवाद के पक्ष में जनमत का निर्माण करना है। जन संचार के रूप में समाचार पत्रों तथा पुस्तकों के साथ साथ पत्रिकायें महत्वपूर्ण भूमिका अदा करती हैं।

जनमत के निर्माण के साधन के रूप में पुस्तक तथा पत्रिका कई कारणों से उपयोगी हैं :

(1) इसमें व्यापकता की विशेषता उपलब्ध है। इसका व्यवहार दूर दूर तक लोगों के मतो को बनाने में किया जाता है।

(2) इसके द्वारा जनमत के निर्माण में समय तथा श्रम की बचत होती है।

(3) भाषण तथा समाचार पत्रों की अपेक्षा यह साधन अधिक टिकाऊ है।

लेकिन, इसमें कुछ दोष भी हैं :

(1). इसका उपयोग अशिक्षित जनसमूह पर करना संभव नहीं है।

(2) कई कारणों से सभी शिक्षित व्यक्तियों के मतों का निर्माण भी इस विधि से संभव नहीं हो पाता है।

(3) यहाँ लेखक तथा जन के बीच सीधा संपर्क नहीं होता है।

(4) शारीरिक मुद्रा द्वारा जन को प्रभावित करना संभव नहीं होता है, जैसा कि भाषण विधि में संभव है।

9.5.4 रेडियो

जनमत के निर्माण का यह एक महत्वपूर्ण साधन है। इसके माध्यम से दैनिक घटनाओं तथा आवश्यक सूचनाओं को जन समूह तक बहुत थोड़े समय में पहुँचा दिया जाता है। किसी समस्या या विषय के पक्ष में जनमत के बनाने के उद्देश्य से अनुकूल सूचनाओं को प्रसारित किया जाता है। प्रजातांत्रिक देश में जनमत के निर्माण का यह साधन समाचार पत्रों, पुस्तकों या पत्रिकाओं से अधिक प्रभावशाली है। रेडियो पर प्रसरित होने वाली सूचनाओं को जनता स्वयं अपने कानों से सुनती है, जिससे एक विशेष जनमत का निर्माण होता है। सूचनओं के साथ साथ लेख, कहानी, वादविवाद, नाटक, संगीत आदि का प्रसारण रेडियो द्वारा किया जाता है जिससे जनमत के निर्माण में काफी सहायता मिलती है। उदाहरण के लिए परिवार नियोजन के पक्ष में जनमत के बनाने में इस साधन ने महत्वपूर्ण भूमिका निभाई है।

जनसंचार के रूप में रेडियो की कई उपयोगिताएं हैं :

(1) समाचार पत्र, पत्रिका या पुस्तक की अपेक्षा रेडियो का क्षेत्र अधिक व्यापक है। रेडियो द्वारा मिनटों में किसी सूचना को दूर दूर तक पहुँचाया जा सकता है, जो समाचार पत्र, आदि से संभव नहीं है।

(2) समाचार पत्र, पत्रिका या पुस्तक की उपयोगिता केवल शिक्षित व्यक्तियों तक ही सीमित है, जबकि रेडियो का उपयोग शिक्षित, अशिक्षित सभी पर करना संभव है।

(3) रेडियो जनमत के निर्माण का एक रोचक साधन है। संगीत, नाटक, आदि से जन का मनोरंजन भी होता है और निश्चित दिशा में उनके मतों का निर्माण भी।

(4) समाचार पत्रों, पत्रिकाओं या पुस्तकों की अपेक्षा रेडियो पर प्रसारित घटनाओं को हम अधिक महत्व देते हैं। इसलिए जब एक देश दूसरे देश को पराजित करता है तो वह पहले पराजित देश के रेडियो पर कब्जा कर लेता है। फिर अनुकूल दिशा में जनमत को बनाने का प्रयास करता है।

किम्बल यंग (1951) के अनुसार रेडियो में सामाजिक गुणार्थ पाया जाता है, जो समाचार पत्र में संभव नहीं है। दृष्टि उत्तेजन की अपेक्षा श्रवण उत्तेजन अधिक महत्वपूर्ण होता है।

रेडियो के साथ एक सुविधा यह भी है कि सूचना देने वाला अपनी भाषा शैली, उतार चढ़ाव, आदि द्वारा श्रोतागण को प्रभावित करने में सफल होते हैं, जो समाचार पत्रों एवं पत्रिकाओं द्वारा संभव नहीं है।

उपर्युक्त लाभों या उपयोगिताओं के होते हुए भी इस साधन के साथ कुछ कठिनाइयाँ भी हैं :

(1) कई कारणों से सभी व्यक्तियों को रेडियो उपलब्ध नहीं होता है, जिससे उनके मतों के निर्माण में इसका कोई विशेष महत्व नहीं रह जाता है।

(2) भाषण विधि की तरह रेडियो के माध्यम से जनसमूह के मतों का हाव भाव द्वारा प्रभावित तथा नियंत्रित करना संभव नहीं है।

(3) समाचार पत्रों या पुस्तकों की तरह रेडियो में टिकाऊपन का गुण नहीं पाया जाता है।

जन संचार के रूप में रेडियो को अधिक सफल बनाने के लिए कैन्ट्रिल एवं आलपोर्ट ने कुछ विशेष सुझाव का उल्लेख किया है :

(1) रेडियो पर पुरुष की अपेक्षा स्त्री द्वारा किये गये प्रोग्राम प्रसारण को लोग अधिक पसन्द करते हैं।

(2) कर्कश आवाज की अपेक्षा मधुर आवाज को लोग अधिक पसन्द करते हैं।

(3) मानक उच्चारक तथा स्पष्ट घोषणा का प्रभाव अधिक पड़ता है।

(4) सामान्य कथनों के बाद विशिष्ट कथन की स्पष्ट घोषणा का प्रभाव अधिक पड़ता है। केवल सामान्य तथा केवल विशिष्ट कथन का प्रभाव अपेक्षाकृत कम होता है।

(5) एक विशेष सीमा तक आवृत्तिकरण लाभप्रद होता है।

(6) रोचक सामग्री हो तो वाक्य लम्बा हो सकता है, किन्तु तात्विक सामग्री होने पर वाक्य छोटा होना चाहिए।

(7) घोषणा की रफ्तार सामग्री के स्वरूप के अनुसार बदलती है। फिर भी अधिकांश सामग्रियों के लिए घोषणा की रफ्तार 115 से 160 शब्द प्रति मिनट होना चाहिए।

(8) रेडियो प्रोग्राम का सत्ताकाल साधारणत: 15 मिनट होना चाहिए। नाटक, आदि प्रोग्राम में ताल तथा प्रसंग में परिवर्तन होता रहता है। इसलिए, इसका सत्ताकाल अपेक्षाकृत लम्बा हो सकता है।

9.5.5 सिनेमा

जनमत के निर्माण में कुछ हद तक सिनेमा सहयोग देता है। सिनेमा निर्माण किसी उद्देश्य को ध्यान में रखकर ही सिनेमा की कहानी, संवाद, गीत, आदि का निर्माण करता है। अभिनेताओं के अभिनय से किसी खास तरह के जनमत के निर्माण में काफी मदद मिलती है। यह कहने की आवश्यकता नहीं कि परिवार नियोजन के पक्ष में जनमत को बनाने में इस साधन ने एक महत्वपूर्ण भूमिका अदा की है।

जनमत के निर्माण के साधन के रूप में सिनेमा की अपनी उपयोगिताएँ हैं :

(1) यह एक रोचह साधन है, जिससे जनमत का निर्माण सहज रूप से संभव होता है।

(2) सिनेमा के पर्दे पर लोग किसी घटना को घटते हुए अपनी आँखों से देखते हैं। इसलिए, उनके विचारों या मतों पर इसका प्रभाव अधिक पड़ता है।

(3) शारीरिक हाव भाव द्वारा जन समूह के मतों को प्रभावित करना संभव होता है, जो रेडियो या समाचार पत्र से संभव नहीं है।

(4) यहाँ सवेग के सिद्धांत को लागू करना संभव होता है। लोगों को उत्तेजित तथा संवेगात्मक बनाकर उनके मतों को प्रभावित करना तथा एक विशेष दिशा में मोड़ना संभव होता है।

फिर भी जन संचार के रूप में सिनेमा की उपयोगिताएँ काफी सीमित हैं :

(1) इस साधान का क्षेत्र इस अर्थ में सीमित है कि बड़े तथा फैले हुए समूहों में मतों को इसके द्वारा प्रभावित करना संभव नहीं है।

(2) समाचार पत्रों या रेडियो द्वारा दूर दूर के लोगों के मतों को प्रभावित करना तथा एक विशेष दिशा में मोड़ना संभव है, जबकि सिनेमा के माध्यम से संभव नहीं है।

(3) कई कारणों से सभी लोग सिनेमा नहीं देख पाते हैं। फलत: ऐसे लोगों के मतों का निर्माण इस साधन से संभव नहीं है। किम्बल यंग (1951) के अनुसार संवेगात्मक अपील, चलचित्र की अपेक्षा रेडियों में अधिक सफल है।

9.5.6 टेलीविजन

जनसंचार के रूप में टेलीविजन आधुनिक युग का सबसे महत्वपूर्ण तथा प्रभावशाली साधन या माध्यम है, जिसका इस्तेमाल व्यापक रूप से जनमत के निर्माण में किया जाता है। इसमें रेडियो तथा सिनेमा दोनों की सुविधायें उपलब्ध हैं। टेलीविजन पर भिन्न भिन्न विषयों या समस्याओं से संबंधित भाषण विद्वानों एवं विशेषज्ञों के विचार, वाद विवाद, नाटक, आदि प्रस्तुत किये जाते हैं, जिससे एक विशेष जनमत का निर्माण होता है। उदाहरण : स्वर्ण मंदिर पर सैनिक धावा को

विरोधी दलों तथा विरोधी देशों ने खूब उछाला। कांग्रेस सरकार तथा इन्दिरा गाँधी के खिलाफ हवा का रुख हो चला। यह देखकर कांग्रेस सरकार द्वारा टेलीविजन पर स्वर्ण मंदिर के अन्दर के घिनौने दृश्यों को देश तथा विदेश के लोगों को बार बार दिखलाया गया जिससे लोगों को यह अनुभव हुआ कि हालत इतनी बिगड़ चुकी थी कि सैनिक कार्यवाही के अलावा दूसरा कोई उपाय नहीं था और इस तरह सैनिक कार्यवाही के पक्ष में जनमत का निर्माण हो सका। इसी तरह भिन्न भिन्न क्षेत्रों में जनमत के निर्माण में टेलीविजन का उपयोग व्यापक रूप से किया जाता है।

जनमत के साधन के रूप में टेलीविजन के कई गुण या लाभ हैं :

(1) टेलीविजन पर हजारों मील दूर की घटनाओं को आँखों से देखकर उनके संबंध में हम कोई विचार निश्चित कर सकते हैं तथा पक्ष या विपक्ष में जनमत बना सकते हैं।

(2) टेलीविजन में सिनेमा या रेडियो दोनों की सुविधायें या लाभ उपलब्ध हैं किसी घटना को हम आँखों से देख सकते हैं तथा किसी सूचना को अपने कानों सुन सकते हैं तथा उसके पक्ष या विपक्ष में कोई निश्चित मत बना सकते हैं। किम्बल यंग (1951) ने स्पष्ट शब्दों में कहा है कि इसमें दृष्टि उत्तेजन तथा श्रवण उत्तेजन दोनों होते हैं। इसलिए, यह साधन अधिक प्रभावशाली बन गया है। यह गुण किसी दूसरे साधन में नहीं है।

(3) इस साधन में रोचकता का गुण पाया जाता है।

(4) इसमें जनमत के निर्माण पर प्रचारक के शारीरिक हाव भाव का प्रभाव पड़ता है।

(5) यहाँ शिक्षित तथा अशिक्षित सभी व्यक्तियों के संवेगों को उत्तेजित करके उनके मतों को एक विशेष दिशा में मोड़ना संभव होता है।

लेकिन इस साधन के साथ एक कठिनाई यह है कि सभी व्यक्तियों के लिए सुलभ उपलब्ध नहीं है। खासकर गरीब लोगों के जनमत के निर्माण में इस साधन का कोई महत्व नहीं है।

9.5.7 इश्तहार

जनमत के निर्माण का एक सरल एवं सहज साधन इश्तहार है। भिन्न भिन्न चित्रों के सहारे घटनाओं को प्रस्तुत करके जनता के मतों को एक विशेष दिशा में मोड़ने का प्रयास किया जाता है। उदाहरण: परिवार नियोजन अथवा परिवार कल्याण के पक्ष में जनमत के निर्माण में इश्तहार या चित्र का सफल उपयोग किया गया है। एक स्त्री तथा एक पुरुष के साथ दो या तीन बच्चों का इश्तहार काफी लोकप्रिय तथा बहुचर्चित चित्र माना जाता है। इसी प्रकार जीवन बीमा के पक्ष में जनमत बनाने में चित्रों ने सफल भूमिका निभाई है।

जनमत के साधन के रूप में इश्तहार में कुछ ऐसे गुण हैं, जो दूसरे साधनों में नहीं हैं :

(1) यह शिक्षित तथा अशिक्षित सभी लोगों के मतों में सफल प्रमाणित होता है।

(2) यह अमीर, गरीब सभी लोगों के मतों के निर्माण में समान महत्व रखता है।

(3) कुछ चित्र ऐसे होते हैं, जिनसे लोगों के संवेग उत्तेजित हो जाते हैं और उनके मत एक खास दिशा में निर्मित होने लगते हैं।

इन गुणों के होते हुए भी इश्तहार की उपयोगिता कई कारणों से सीमित है :

(1) इसके द्वारा सभी व्यक्तियों के विचारों को प्रभावित करना संभव नहीं होता है।

(2) इसमें रोचकता का गुण नहीं पाया जाता है।

(3) हर स्थान पर यह साधन उपलब्ध नहीं हो पाता है।

(4) इस साधन द्वारा केवल आँखें प्रभावित होती हैं, कान नहीं प्रभावित होते ।

फलत: लोगों के विचारों, मतों पर चित्रित घटना का केवल आंशिक प्रभाव पड़ता है।

इस प्रकार स्पष्ट हुआ कि जनमत के निर्माण के उपर्युक्त कई साधन या माध्यम हैं। स्पष्ट हुआ कि इन माध्यमों के

अपने अपने लाभ तथा हानियाँ हैं। अत: जनमत निर्माण में आवश्यकतानुसार अधिक से अधिक साधनों का उपयोग किया जाता है।

9.6 प्रजातंत्र में जनमत की भूमिका

प्रजातांत्रिक समाज में जनमत का अध्ययन अधिक सार्थक तथा आवश्यक प्रतीत होता है। सच तो यह है कि जनमत के अध्ययन के बिना लोकतन्त्र या प्रजातंत्र सफल हो ही नहीं सकता है। संक्षेप में प्रजातंत्र से जनमत के महत्व को निम्नलिखित प्रसंगों में देखा जा सकता है :

(1) **प्रारंभिक समाज में जनमत :** प्रारंभिक समाजों में सार्वजनिक विषयों पर जनमत का निर्माण आवश्यक समझा जाता था। स्थानीय समस्याओं के संबंध में जनमत को जानने का प्रयास किया जाता था। सार्वजनिक संस्थानों, शिक्षालयों, टैक्स दर आदि से संबंधित सहमति के आधार पर कोई आवश्यक कदम उठाया जाता था। सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, नैतिक, आदि समस्याओं के संबंध में जन के मतों को जानने तथा अनुकूल कदम उठाने का प्रयास किया जाता था।

(2) **आधुनिक समाज में जनमत :** आधुनिक समाज में जनमत का महत्व और भी अधिक हो चला है। कारण, प्रारंभिक समाज की अपेक्षा आधुनिक समाज अधिक जटिल तथा विस्तृत है। भारत में कठोर जाति व्यवस्था तथा साम्प्रदायिक भावना के कारण आधुनिक समाज अत्यधिक जटिल बन गया है। ऐसे समाज को समुचित रूप से संचालित करने के लिए जनमत का अध्ययन बहुत आवश्यक है। यह बात शहरी तथा देहाती दोनों समाजों पर लागू होती है।

(3) **लोकतत्र में जनमत :** जनमत का सबसे अधिक महत्वपूर्ण तथा सार्थक स्थान प्रजातांत्रिक समाज या देश में देखा जा सकता है। प्रजातांत्रिक सरकार वास्तव में जनता के बहुमत का प्रतिनिधित्व करती है। वह तभी तक कायम रहती है जब तक उसे बहुमत प्राप्त होता है। जब जनमत या बहुमत सरकार के विपक्ष में हो जाता है, तो सरकार भंग हो जाती है। अत: प्रजातांत्रिक सरकार के बनने तथा सुरक्षित रहने के लिए यह आवश्यक है कि जनमत उसके पक्ष में हो। इसलिए, अब्राहम लिंकन ने कहा है कि "प्रजातंत्र जनता की सरकार है, इसका निर्माण जनता द्वारा तथा जनता के हित के लिए किया जाता है।"

प्रजातंत्र में सरकार के कार्यों के मूल्यांकन करने हेतु जनमत की आवश्यकता होती है। सरकार द्वारा बनाई गयी नीति या योजना में कौन सा दोष है, इसे जनमत के आधार पर ही निर्धारित किया जाता है।

नई नीति या योजना बनाने में भी सरकार को जनमत से बड़ी सहायता मिलती है। जनमत की जानकारी प्राप्त करने के बाद ही सरकार कोई नीति या योजना बनाती है तथा उसपर अमल करती है। यदि जनमत पक्ष में नहीं होता है तो प्रस्तावित नीति या योजना वापस ले ली जाती है। स्पष्ट है कि लोकतंत्र में जनमत का महत्वपूर्ण स्थान है। सरकार बनाने, सरकार को सुरक्षिता रखने, इसे प्रभावशाली बनाने तथा अगले चुनाव में पुन: विजयी होने के लिए जनमत को अपने पक्ष में बनाये रखना आवश्यक है।

9.7 सारांश

(1) जनमत का तात्पर्य जन के वैसे मत से है जो किसी विवादग्रस्त समस्या या विषय से संबंधित हों। जनमत की परिभाषाओं के विश्लेषण से कई बातें स्पष्ट होती हैं- यह सामान्य महत्व के विषयों पर बनता है जिसका संबंध एक विशेष से विवादग्रस्त विषय से होता है। यह एक सामाजिक निर्णय है जिसके लिए आवश्यक है कि समुदाय, समाज या राष्ट्र के सदस्य समस्या के प्रति जागरूक हों।

(2) जनमत के स्वरूप से संबंधित कई बातें महत्वपूर्ण हैं। जैसे- विवादाग्रस्त, विषय, बहुमत, विवेकशीलता, गत्यात्मकता, विशिष्ट समय, विकासात्मक प्रक्रिया, सामूहिक व्यवहार, सामाजिक एवं राजनैतिक अनुशासन,

विश्वास की तीव्रता एवं विचारवाणी तथा कार्य की स्वतंत्रता । उपर्युक्त बातें जनमत के स्वरूप को स्पष्ट करने में सहायक हैं।

(3) जनमत को प्रभावित करने वाले कई महत्वपूर्ण कारक हैं। ये हैं- सामाजिक मानदण्ड, मूल्य, सामाजिक वर्ग घटनाएँ नेतृत्व, वृहत संदर्भ, विरोधी दबाव पूर्वधारणा, स्थिराकृति, व्यक्तिगत मूल्य दर्शन एवं प्राप्त सूचना का स्रोत। उपर्युक्त लिखित कारक जनमत को सार्थक रूप में प्रभावित करते हैं।

(4) जनमत के निर्माण में साधन की आम भूमिका है। अनुकूल एवं प्रभावशाली साधन प्रभावकारी जनमत तैयार करता है। ये साधन हैं- भाषण, समाचार पत्र, रेडियो, पुस्तक, पत्रिकाएँ, सिनेमा, टी०वी०, इश्तहार, इत्यादि। उपर्युक्त वर्णित साधन जनमत को काफी हद तक प्रभावी बनाता है।

(5) जनमत से लोकतंत्र काफी प्रभावित होता है। जनमत समाज एवं लोकतंत्र दोनों के लिए महत्वपूर्ण माना जाता है।

9.8 पाठ में प्रयुक्त शब्द कुंजी

जन,	मत,	जनमत,	गतिशीलता,
प्रमाणीकरण,	बहुमत,	विवेकशीलता,	सामूहिक व्यवहार,
संकेतशीलता,	वाणी,	तीव्रता,	वृहत संदर्भ,
सार्थकता,	शैलियाँ,	आत्मगत निर्धारक,	मूल्य दर्शन,
सर्वोत्तम न्यायालय,	विषय विशेषज्ञ,	उपकरण,	भाषणवाणी,
सुझाव,	रोमांस,	साम्यवाद,	जन संचार,
कर्कश,	तात्विक सत्ताकाल,	संवाद,	अभिनेता,
वाद विवाद,	श्रवण उत्तेजन।		

9.9 अभ्यास के लिए प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

1. जनमत के अर्थ को समझाएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 9.1 देखें

2. जनमत की परिभाषा दें।

उत्तर : उत्तर के लिए 9.2 देखें

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. जनमत को प्रभावित करने वाले कारकों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 9.4 से 9.4.9 तक देखें

2. जनमत के साधन, माध्यम या उपकरणों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 9.5 से 9.5.7 तक देखें

3. लोकतंत्र में जनमत की भूमिका पर प्रकाश डालें।

उत्तर : उत्तर के लिए 9.6 देखें

9.10 अन्य अध्ययन सामग्रियाँ

1. डा॰ ए॰ के॰ सिंह : समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा
2. श्रीवास्तव, पांडे एवं सिंह : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
3. तोमर : आधुनिक समाज मनोविज्ञान
4. एस॰ एस॰ माथुर : समाज मनोविज्ञान

■

सामाजिक तनाव

पाठ संरचना

10.0 पाठ का उद्देश्य

10.1 सामाजिक तनाव का अर्थ

10.2 सामाजिक तनाव के कारण

- 10.2.1 सामाजिक तनाव के मनोवैज्ञानिक कारक
- 10.2.2 सामाजिक तनाव के व्यक्तिगत कारक
- 10.2.3 सामाजिक तनाव के सामाजिक कारक
- 10.2.4 सामाजिक तनाव के आर्थिक कारक
- 10.2.5 सामाजिक तनाव के धार्मिक कारक
- 10.2.6 सामाजिक तनाव के भौगोलिक कारक
- 10.2.7 सामाजिक तनाव के राजनैतिक कारक
- 10.2.8 सामाजिक तनाव के सांस्कृतिक कारक
- 10.2.9 सामाजिक तनाव के ऐतिहासिक कारक

10.3 सामाजिक तनाव को दूर करने के उपाय

- 10.3.1 स्वस्थ समाजीकरण
- 10.3.2 राष्ट्रीय धन सम्पत्ति का उचित वितरण
- 10.3.3 उचित शिक्षा
- 10.3.4 आपत्तिजनक घटनाओं पर रोक
- 10.3.5 पारस्परिक संपर्क
- 10.3.6 सामान्य लक्ष्य
- 10.3.7 आपत्तिजनक रीति रिवाज पर रोक
- 10.3.8 स्वस्थ राजनीति अनुकूल विधान

10.4 सामाजिक तनाव के प्रकार

10.5 जातीय तनाव

10.5.1 जातीय तनाव के कारण

10.5.2 जातीय तनाव कम करने के उपाय

10.6 साम्प्रदायिक तनाव

10.6.1 साम्प्रदायिक तनाव के कारण

10.6.2 साम्प्रदायिक तनाव दूर करने के उपाय

10.7 क्षेत्रीय तनाव

10.7.1 क्षेत्रीय तनाव

10.7.1 क्षेत्रीय तनाव के कारण

10.7.2 क्षेत्रीय तनाव कम करने के उपाय

10.8 मनोवृत्ति संगठन का प्रत्यय या संकलन

10.8.1 मनोवृत्ति संगठन का महत्व

10.9 सारांश

10.10 शब्द कुंजी

10.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

10.12 अन्य उपयोगी अध्ययन सामग्रियाँ

10.0 पाठ का उद्देश्य

इस पाठ का एक उद्देश्य पाठकों को सामाजिक तनाव के अर्थ, स्वरूप तथा धनात्मक एवं नकारात्मक प्रभावों से अवगत कराना है। इसका दूसरा उद्देश्य सामाजिक तनाव के विभिन्न कारणों का उल्लेख करना है ताकि पाठकगण यह जान सकें कि सामाजिक तनाव किस प्रकार विकसित होता है। इस पाठ का तीसरा उद्देश्य सामाजिक तनाव को दूर करने के उपायों का उल्लेख करना है ताकि पाठकगण यह जान सकें कि सामाजिक तनाव को कैसे रोका जा सकता है। इसका चौथा उद्देश्य सामाजिक तनाव के विभिन्न प्रचारकों तथा जातिगत तनाव, जातीय तनाव, क्षेत्रीय तनाव आदि के कारणों तथा उपायों से पाठकगण को अवगत कराना है। इसके अलावा इस पाठ का यह भी उद्देश्य है कि इस पाठ से संबंधित पाठकों की उपलब्धि हेतु विभिन्न लघु उत्तरीय तथा दीर्घ उत्तरीय प्रश्नों की सूची प्रस्तुत की जाये।

10.1 सामाजिक तनाव का अर्थ

तनाव का अर्थ है बेचैनी, अशांति या चिंता की स्थिति। तनाव की स्थिति में व्यक्ति अशांत, बेचैन तथा चिन्तित रहता है। चैपलिन (1975) के अनुसार " तनाव का तात्पर्य चिंता, अशांति तथा बेचैनी की स्थिति से है जिसमें पेशीय तनाव के भाव निहित होते हैं। यही तनाव जब पूरे समूह, समुदाय समाज में फैल जाता है तो इसे सामाजिक तनाव कहते हैं। व्यक्तिगत तनाव का संबंध किसी एक व्यक्ति से होता है जबकि सामाजिक तनाव का संबंध पूरे समाज, समूह या समुदाय से होता है। व्यक्तिगत तनाव में केवल एक व्यक्ति चिंता, अशांति तथा बेचैनी महसूस करता है और पेशीय तनाव के भाव से पीड़ित होता है, जबकि सामाजिक तनाव में समाज या समूह के सभी या अधकिांश व्यक्ति चिंता, अशांति एवं बेचैनी महसूस करते हैं तथा पेशीय तनाव से ग्रसित रहते हैं। अतः हम कह सकते हैं कि "सामाजिक तनाव का तात्पर्य उस सामाजिक स्थिति से है जिसमें समाज या समूह के सभी या अधिकांश सदस्य चिंता, अशंति तथा बेचैनी महसूस करते हैं और पेशीय तनाव के भावों से पीड़ित होते हैं।"

उदाहरण : बाढ़ या भूकम्प के संबंध में सरकार द्वारा चेतावनी की घोषणा होने पर संबंधित क्षेत्र के पूरे समाज के लोग चिंता, अशांति तथा बेचैनी से पीड़ित हो जाते हैं। तनाव की लहर समाज के सभी या अधिकांश सदस्यों में देखी जाती है। एक अर्थ में समाज के इसी तनाव को सामाजिक तनाव कहेंगे। दूसरे अर्थ में, सामाजिक तनाव का तात्पर्य दो समूहों, समाजों, वर्गों या समुदायों के बीच खिंचाव की स्थिति से है। जब यह खिंचाव की स्थिति दो संप्रदायों के बीच उत्पन्न होती है तो इसे सांप्रदायिक तनाव कहते हैं। जब तनाव की यह स्थिति दो जातियों के बीच होती है तो इसे जाति तनाव कहते हैं और जब यह स्थिति दो क्षेत्रों के बीच उत्पन्न होती है तो इसे क्षेत्रीय तनाव कहते हैं।

10.2 सामाजिक तनाव के मनोवैज्ञानिक कारक

सामाजिक तनाव अथवा समूह संघर्ष को उत्पन्न करने में कई प्रकार के मनोवैज्ञानिक कारकों या निर्धारकों का हाथ होता है। इनमें निम्नलिखित कारक या निर्धारक महत्वपूर्ण हैं :

(1) **ध्वंसात्मक प्रवृत्ति :** फ्रायड (1920) के अनुसार व्यक्ति में दो मूल प्रवृत्तियाँ पाई जाती हैं। इन्हें जीवन मूल प्रवृति तथा मृत्यु मूल प्रवृत्ति कहते हैं। जीवन मूल प्रवृत्ति या प्रेम मूलप्रवृत्ति की वस्तुगत अभिव्यक्ति के कारण व्यक्ति दूसरों के साथ स्नेहपूर्ण व्यवहार करता है तथा रचनात्मक कार्य करता है। इसके विपरीत मृत्यु मूलप्रवृत्ति या घृणा मूलप्रवृत्ति की वस्तुनिष्ठ अभिव्यक्ति के कारण व्यक्ति दूसरों से घृणा करता है तथा ध्वंसात्मक कार्य करता है। इसी ध्वंसात्मक कार्य के कारण सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है।

(2) **निराशा या कुंठा :** सामाजिक तनाव का एक मनोवैज्ञानिक कारण कृण्ठा या निराशा है। जब व्यक्ति के लक्ष्य या लक्ष्यों को प्राप्त करने में बाधा पहुंचती है तो वह कुण्ठा महसूस करने लगता है और तनाव से पीड़ित हो जाता है। जब समाज के अधिकांश व्यक्तियों में यह तनाव जड़ पकड़ लेता है तो सामाजिक तनाव की उत्पत्ति होती है। इसी तनाव के कारण आक्रमण तथा हिंसा करने पर लोग बाध्य होते हैं। ऐसा करने से तनाव दूर हो जाता है। स्मरण रखना चाहिए कि तनाव वास्तव में कुण्ठा तथा आक्रमण के बीच की स्थिति है। एक जाति के लोगों की आवश्यकताओं की संतुष्टि में दूसरी जाति के लोग बाधक होते हैं अथवा उन्हें बाधक समझा जाता है तो पहली जाति के लोगों में कुण्ठा उत्पन्न होती है, जो सामाजिक तनाव को जन्म देती है। यही तनाव कभी कभी जातिगत दंगों के रूप में दीख पड़ता है।

(3) **प्रतियोगिता एवं प्रतिस्पर्धा :** सामाजिक तनाव या समूह तनाव को उत्पन्न करने में प्रतियोगिता तथा प्रतिस्पर्धा का भी हाथ होता है। एक समूह के लोग दूसरे समूह के लोगों के साथ प्रतिस्पर्धा का भाव रखते हैं जो तनाव का कारण बनता है। भारत में सांप्रदायिक तनाव को उत्पन्न करने में इस मनोवैज्ञानिक कारक का बहुत बड़ा हाथ होता है। आर्थिक क्षेत्र, राजनैतिक क्षेत्र या किसी दूसरे क्षेत्र में प्रतियोगिता के कारण हिन्दुओं तथा मुसलमानों के बीच स्पर्धा का भाव

उत्पन्न होता है, जो साम्प्रदायिक तनाव तथा दंगा का कारण बनता है। इसी प्रकार उच्च जाति तथा निम्न जाति के लोगों के बीच आर्थिक तथा राजनैतिक क्षेत्रों में प्रतिद्वन्द्विता या प्रतिस्पर्धा के कारण जातिगत तनाव उत्पन्न होता है। वर्ग संघर्ष को उत्पन्न करने में भी प्रतियोगिता तथा प्रतिस्पर्धा का हाथ होता है।

(4) **असमान के प्रति नापन्दगी :** सामाजिक तनाव का एक मुख्य मनोवैज्ञानिक कारण घृणा मूलक प्रवृत्ति है। मनोविश्लेषकों (जैसे- फ्रिउड, 1920) के अनुसार व्यक्ति में जीवन मूल प्रवृत्ति तथा मृत्यु मूलप्रवृत्ति दोनों पाई जाती है। इन्हें क्रमशः प्रेम मूल प्रवृत्ति तथा घृणा मूलप्रवृत्ति भी कहते हैं। जीवन मूल प्रवृत्ति (प्रेम मूलप्रवृत्ति) के कारण व्यक्ति दूसरे व्यक्ति से प्रेम करता है तथा रचनात्मक क्रिया करता है। मृत्यु मूलप्रवृत्ति के कारण वह दूसरों से नफरत करता है तथा ध्वंसात्मक क्रिया करता है। सामान्यतः प्रेम मूल प्रवृत्ति समान लोगों की ओर तथा घृणा मूल प्रवृत्ति असमान लोगों की ओर अग्रसर होती है। फलतः व्यक्ति अपने से भिन्न लोगों से घृणा करने लगता है तथा वैरभाव रखने लगता है। भारत में साम्प्रदायिक तनाव, जातिगत तनाव का एक मौलिक कारण है। हिन्दू तथा मुसलमान अपने को एक दूसरे से भिन्न समझ कर वैरभाव रखने लगते हैं जो सांम्प्रदायिक तनाव का कारण बनता है। एक जाति के लोग दूसरी जाति के लोगों को अपने से भिन्न मानते हैं जो जातिगत तनाव का कारण बनता है।

(5) **असुरक्षा का भाव :** इस मनोवैज्ञानिक कारक का प्रभाव भी सामाजिक तनाव पर पड़ता है। साम्प्रदायिक तनाव की उत्पत्ति में इस कारक का बहुत बड़ा हाथ होता है। जब एक समुदाय के लोगों को दूसरे समुदाय के लोगों से अपने जान माल की असुरक्षा का अनुभव होता है तो वे तनाव से भर जाते हैं और अपनी सुरक्षा के लिए चिन्तित हो उठते हैं। उच्च जाति के लोग निम्न जाति के लोगों के बढ़ते कदम को देखकर अपने भविष्य को असुरक्षित समझने लगते हैं और इसे सुरक्षित करने के लिए कभी आरक्षण का विरोध करते हैं, कभी आक्रमणकारी व्यवहार करते हैं और कभी सामूहिक हिंसा के लिए षडयंत्र करते हैं। परिणामतः जातिगत तनाव, जातिगत दंगे घटित होते हैं।

(6) **प्रक्षेपण :** सामाजिक तनाव या वर्ग संघर्ष का यह भी एक महत्वपूर्ण मनोवैज्ञानिक कारण है। प्रक्षेपण या आरोपण वह मनोरचना है, जिसमें एक व्यक्ति अपने आवेगों, कमजोरियों तथा अवगुणों को दूसरों पर आरोपित करके संतुष्टि प्राप्त करता है। इसी तरह एक समूह दूसरे समूह पर अथवा एक समाज दूसरे समाज पर अपने ऐसे आवेगों को आरोपित करता है, जो उसके अपने ईगो के लिए कष्टकर या दुखद होता है। अतः भिन्न भिन्न समूहों या समाजों के बीच एक दूसरे के प्रति आवेगों के आरोपण तथा प्रत्यारोपण के कारण सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है। भारतयी परिवेश में जातिगत तनाव तथा साम्प्रदायिक तनाव का यह एक प्रधान कारण है।

10.2.2 व्यक्तित्व कारक

सामाजिक तनाव या सामूहिक तनाव का एक आधार व्यक्तित्व सरंचना तथा व्यक्तित्व संगठन है। कुछ लोगों के व्यक्तित्व की संरचना या संगठन कुछ ऐसा होता है कि समाजिक तनाव उत्पन्न करने में उन्हें आनन्द मिलता है। प्रत्येक समूह या समाज में कुछ ऐसे लोग होते हैं जो रोगात्मक वैर भाव सी पीड़ित होते हैं। ऐसे लोग दूसरों पर आक्रमण करके अपने वैरभावकी संतुष्टि करते हैं।

10.2.3 सामाजिक कारक

सामाजिक तनाव को उत्पन्न करने में कई तरह के सामाजिक कारकों का हाथ होता है। सभी समूहों या समाजों के अलग अलग निश्चित मूल्य, मानदण्ड, तथा विश्वास होते हैं। इनमें विरोध होने के कारण सामाजिक तनाव, उत्पन्न होता है। भारतीय संस्कृति में सांप्रदायिक तनाव का यह एक बहुत बड़ा कारण है। हिन्दू समाज तथा मुस्लिम समाज के सामांजिक मूल्यों, मानदण्डों, परम्पराओं तथा रीति रिवाजों में अंतर होने के कारण दोनों समाजों के लोगों के बीच अलगाववाद का भाव विकसित होता है, जो साम्प्रदायिक तनाव का आधार बन जाता है।

10.2.4 आर्थिक कारक

सामाजिक तनाव एंव वर्ग तनाव को उत्पन्न करने में आर्थिक कारकों का बहुत बड़ा हाथ होता है। यदि गंभीरता से विचार किया जाए तो पता चलेगा कि आर्थिक विषमता, आर्थिक संकट, आर्थिक पिछड़ापन, आर्थिक फुलाव आदि सामाजिक तनाव के मुख्य कारण हैं। जिस समाज में मुट्ठी भर लोगों के पास धन दौलत का अम्बार (ढेर) हो और अधिकांश लोग भुखमरी, बीमारी, बेरोजगारी तथा गरीबी से पीड़ित हों, उस समाज में संघर्ष एवं तनाव का उत्पन्न होना स्वाभाविक है। भारत में निम्न जाति तथा उच्च जाति के हिन्दुओं के बीच सामूहिक संघर्ष का एक प्रधान कारण यही आर्थिक विषमता है।

10.2.5 धार्मिक कारक

विशेष रूप से भारतीय संस्कृति के अन्तर्गत सामाजिक तनाव तथा सामूहिक संघर्ष का एक कारण तथाकथित धर्म है। साम्प्रदायिक तनाव, जातिगत तनाव, आदि सामाजिक तनावों को उत्पन्न करने में इस कारण का स्पष्ट हाथ देखा जाता है। हिन्दू धर्म गाय को पूज्य मानता है और गो-हत्या को पाप बतलाता है, जबकि इस्लाम धर्म गाय को एक साधारण पशु मानता है और गो-हत्या को सामान्य व्यवहार बतलाता है। हिन्दुओं के भगवान मन्दिर में और मुसलमानों के खुदा मस्जिद में रहते हैं। विश्वास किया जाता है कि भगवान को मस्जिद से घृणा है और खुदा को मन्दिर से नफरत है। इन विरोधी तथाकथित धार्मिक विश्वासों के कारण दोनों सम्प्रदायों के बीच वैरभाव उत्पन्न होता है, जो सम्पप्रदायिक तनाव तथा दंगा का कारण बनता है। इसी तरह नीची जाति के हिन्दुओं को आज भी ऊंची जाति के हिन्दू धार्मिक समानता तथा सामाजिक समानता देने के लिए तैयार नहीं हैं, जिसके कारण जातीय तनाव उत्पन्न होता है तथा जातीय दंगे होते हैं।

10.2.6 भौगोलिक कारक

भौगोलिक कारणों से भी सामाजिक तनाव उत्पन्न होता है। भिन्न भिन्न भौगोलिक क्षेत्रों में रहने वाले लोगों के शारीरिक लक्ष्यों के साथ साथ रहन-सहन, बोल-चाल, रीति-रिवाज, आदि में अंतर होने के कारण पृथक्वाद है तथा अलगाववाद की प्रवृत्ति उत्पन्न होती है। यही प्रवृत्ति सामाजिक तनाव का कारण बनती है। वे एक दूसरे को न केवल अपने से भिन्न समझते हैं, बल्कि एक दूसरे के प्रति वैरभाव को भी रखने लगते हैं। आदिवासियों तथा गैर-आदिवासियों के बीच इस तरह का सामाजिक तनाव देखा जाता है। भिन्न भिन्न क्षेत्रों में भी इसी प्रकार का तनाव पाया जाता है। मैथिली, बज्जिका, भोजपुरी, आदि क्षेत्रों के लोगों के क्षेत्रीय भाव होने के कारण क्षेत्रीय तनाव उत्पन्न होता है।

10.2.7 राजनैतिक कारक

कई तरह के राजनैतिक कारणों से भी सामाजिक तनाव या संघर्ष उत्पन्न होता है। भिन्न भिन्न राजनैतिक दलों के अपने अपने निश्चित मूल्य, मानदण्ड, सिद्धांत आदि होते हैं, जिन में भिन्नता और कभी कभी विरोध होने के कारण उन दलों के बीच तनाव उत्पन्न होता है। मुस्लिम लीग, जनसंघ, जमाते इस्लामी, आर॰ एस॰एस॰ आदि दलों की विचार-धाराओं में विरोध होने के कारण वे न केवल आपस में टकराते हैं, बल्कि उनके प्रभाव में आकर पूरा समाज या पूरा राष्ट्र संघर्ष एवं तनाव का शिकार बन जाता है। सांप्रदायिक तनाव तथा जातिगत तनाव को उत्पन्न करने में इन दलों का बहुत बड़ा हाथ होता है । वोट प्राप्त करने के विचार से राजनैतिक नेता जातिवाद, क्षेत्रवाद, संप्रदायवाद तथा वर्ग भेद का भाव विकसित करके समाज को कई टुकड़ों में विभाजित कर देते हैं, जिससे जातीय तनाव, सांप्रदायिक तनाव या वर्ग तनाव उत्पन्न होता है।

10.2.8 सांस्कृतिक कारक

सामाजिक तनाव तथा समूह तनाव की उत्पत्ति में सांस्कृतिक कारकों का हाथ होता है। संस्कृति एक वृहत शब्द है, जिसके अन्तर्गत धर्म, रीति-रिवाज, मूल्य , मानदण्ड, विचारधारा, भाषा आदि की गणना की जाती है। इन्हें सांस्कृतिक

प्रतिरूप कहते हैं। भिन्न भिन्न संस्कृतियों के प्रतिरूपों में भिन्नता होने के कारण अलगाव का भाव उत्पन्न होता है,जो सामाजिक तनाव का कारण बनता है। हिन्दू संस्कृति तथा मुस्लिम संस्कृति और इसी तरह आदिवासी संस्कृति तथा गैर-आदिवासी संस्कृति के प्रतिरूपों में भिन्नता तथा विरोध होने के कारण अलगाव तथा पृथक होने का भाव उत्पन्न होता है, जो सामाजिक तनाव को जन्म देता है।

10.2.9 ऐतिहासिक कारक

सामाजिक तनाव अथवा सामूहिक तनाव की उत्पन्न करने में ऐतिहासिक कारको का भी हाथ होता है। इतिहास की ऐसी घटनायें जिनमें किसी समुदाय विशेष या वर्ग विशेष के लोगो के संवेग तथा मनोभाव उत्तेजित होते हैं, वे सामाजिक तनाव या सामूहिक तनाव को उत्पन्न करती हैं। भारतीय परिवेश में मुसलमानों तथा हिन्दुओं के बीच सांप्रदायिक तनाव का एक मुख्य कारण ऐतिहासिक आपत्तिजनक घटनायें हैं। भारत में मुसलमानों के प्रशासन के समय हिन्दुओं पर किये गये वास्तविक या आरोपित अत्याचारों की जानकारी मिलने पर हिन्दुओं में मुसलमानों के प्रति घृणा, स्पर्धा तथा प्रतिशोध का भाव पैदा होता है, जो साम्प्रदायिक तनाव का कारण बनता है। बाबरी मस्जिद से उत्पन्न सांप्रदायिक तनाव इसका ताजा उदाहरण है। इसी प्रकार निम्न जाति तथा पिछड़े वर्ग के साथ उच्च जाति तथा उन्नत वर्ग के द्वारा किये गये वास्तविक या आरोपित अत्याचारों की जानकारी होने पर निम्न जाति तथा उच्च जाति के बीच अथवा पिछड़ा वर्ग तथा उन्नत वर्ग के बीच तनातनी का भाव उत्पन्न होना स्वाभविक है। स्पष्ट है कि सामाजिक तनाव के उपर्युक्त अनेक कारण हैं। अतः इसके वास्तविक स्वरूप की जानकारी हेतु इन सभी कारणों को ध्यान में रखना आवश्यक है।

10.3 सामाजिक तनाव या समूह-तनाव को दूर करने के उपाय या विधियाँ

सामाजिक तनाव या समूह-तनाव के निराकरण, रोकथाम या घटाव के उपायों या विधियों की व्याख्या करने के पहले दो बातों का उल्लेख कर देना आवश्यक है। पहली बात यह है कि सामाजिक तनाव को पूर्णतः रोकना संभव नहीं है। हम सामाजिक तनाव को बहुत अंशों में कम कर सकते हैं, इसे जड़ से साफ नहीं कर सकते, क्योंकि असमान के प्रति नापसंदगी एवं घृणा तथा समान के प्रति पसन्दगी एवं प्रेम स्वाभाविक है। दूसरी बात यह है कि चूँकि सामाजिक तनाव के अनेक कारण हैं, इसलिए काफी रोकथाम के लिए अनेक उपायों या विधियों का उपयोग करना आवश्यक है। इन दोनों बातों को ध्यान में रखते हुए सामाजिक तनाव को दूर करने या रोकने के लिए निम्नलिखित उपायों का उपयोग किया जा सकता है :

10.3.1 स्वस्थ समाजीकरण

सामाजिक तनाव को रोकने का एक सुन्दर उपाय यह है कि बच्चों के लिए स्वस्थ समाजीकरण की व्यवस्था की जाए। माता पिता तथा परिवार के अन्य सदस्यों को चाहिए कि वे बच्चों में दूसरे समूह, समाज या संप्रदाय के प्रति भी सकारात्मक मनोवृत्ति के विकास का प्रयास करें। उन्हें चाहिए कि बच्चों के सामने दूसरे समूह, समाज, या समुदाय के प्रति वचन या व्यावहार से नकारात्मक मनोवृत्ति, घृणा, द्वेष आदि का प्रदर्शन न करें। इस प्रकार बच्चों का प्राथमिक समाजीकरण स्वस्थ हो सकेगा। लेकिन, इसके साथ साथ द्वितीयक समाजीकरण का स्वस्थ होना भी आवश्यक है। यह समाजीकरण शिक्षालय, पुस्तकालय, सामाजिक संस्थान, राजनैतिक संगठन आदि माध्यमों द्वारा होता है। इन विभिन्न माध्यमों द्वारा भिन्न भिन्न समाजों एवं समुदायों के लोगों का समाजीकरण जिस हद तक स्वस्थ हो सकेगा, उसी हद तक जातीय तनाव, सांप्रदायिक तनाव आदि सामाजिक तनाव तथा संघर्ष घट सकेंगे।

10.3.2 राष्ट्रीय धन एवं सम्पत्ति का उचित वितरण

सामाजिक तनाव को रोकने का एक व्यावहारिक उपाय यह है कि राष्ट्रीय धन तथा सम्पत्ति का बंटवारा उचित रूप

से कर दिया जाए। कारण, राष्ट्रीय धन एवं सम्पत्ति के अनुचित वितरण से देश के कुछ ही लोग सुखी सम्पन्न हैं और अधिकांश लोग गरीबी, बेरोजगारी, भुखमरी तथा बीमारी से पीड़ित हैं। फलतः वे निराशा तथा कुण्ठा से पीड़ित होकर पूँजीपतियों की ओर आक्रमणशील व्यावहार करने के लिए बाध्य होते हैं। अतः इन्हें इस प्रकार के आक्रमणशील व्यवहारों से रोकने के लिए यह आवश्यक है कि राष्ट्रीय धन तथा सम्पत्ति का उचित वितरण किया जाए ताकि भारत की अधिकांश जनता भुखमरी तथा गरीबी से अपने आप को बचा सके तथा शान्तिपूर्ण जीवन बिता सके। सामाजिक तनाव को दूर करने, विभिन्न समूहों के बीच संघर्ष को दूर करने तथा सामाजिक शांति स्थापित करने के लिए आर्थिक विषमता को कम करना आवश्यक है।

10.3.3 उचित शिक्षा

सामाजिक तनाव तथा समूह संघर्ष को दूर करने या रोकने के लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था आवश्यक है। अज्ञानता भी सामाजिक तनाव का एक बड़ा कारण है। अतः शिक्षा के प्रसारण द्वारा अज्ञानता को दूर करने पर सामाजिक संघर्ष या तनाव कुछ अंशों में दूर हो सकता है। भारत में साम्प्रदायिक तनाव का एक मुख्य कारण यह है कि हिन्दू तथा मुसलमान एक दूसरे के प्रति सही जानकारी नहीं रखते हैं, बल्कि गलत जानकारी रखते हैं। अतः शिक्षा द्वारा उन्हें सही जानकारी देने पर यह तनाव बहुत अंशों में दूर हो सकता है। लेकिन, केवल शिक्षा से काम नहीं चलेगा। इसके लिए उचित शिक्षा आवश्यक है। उचित शिक्षा का अर्थ यह है कि बच्चों को केवल ऐसी बातों की शिक्षा दी जाए, जिनसे किसी प्रकार के तनाव या संघर्ष के उत्पन्न होने की संभावना न हो। ऐसी बातों की शिक्षा नहीं दी जाए, जिनसे जातीय तनाव, वर्ग तनाव या सांप्रदायिक तनाव के उभरने की संभावना हो। विशेष रूप से पाठशालाओं तथा मदरसों की शिक्षा को स्वस्थ बनाना बहुत आवश्यक प्रतीत होता है।

10.3.4 आपत्तिजनक ऐतिहासिक घटनाओं पर रोक

इतिहास की ऐसी घटनाओं के प्रकाशन पर रोक लगा दी जाए जो किसी समाज या वर्ग या समुदाय के लिए आपत्तिजनक हों। इससे ऐतिहासिक घटनाओं के कारण उत्पन्न होने वाले सामाजिक तनाव तथा संघर्ष की रोकथाम संभव हो सकेगी। विशेष रूप से हिन्दू-मुस्लिम साम्प्रदायिक तनाव तथा निम्न वर्ग उच्च वर्ग संघर्ष में बहुत हद तक कमी हो सकती है। यदि मुगल बादशाह औरंगजेब द्वारा हिन्दुओं पर तथाकथित अत्याचारों या बाबरी मस्जिद से संबंधित असल या आरोपित घटनाओं को इतिहास के पन्नों से निकाल दिया जाता तो इससे उत्पन्न सामाजिक तनाव या संघर्ष से हम मुक्त रहते।

10.3.5 पारस्परिक संपर्क

सामाजिक तनाव या समूह तनाव को रोकने का एक उपाय यह है कि भिन्न भिन्न समूहों, समाजों तथा सम्प्रदायों के बीच सामाजिक दूरी को घटाया जाए। इसके लिए आवश्यक है कि उनके बीच पारस्परिक संपर्क स्थापित करने की व्यवस्था की जाए। सम्मेलन, गोष्ठी, नाटक, टेलीविजन, आदि माध्यमों से यह व्यवस्था संभव हो सकती है। इसी प्रकार समाकलित प्रयोजनों के आधार पर सामाजिक दूरी को कम करके सामाजिक तनाव को दूर किया हा सकता है। अध्ययनों से पता चलता है कि समाकलित गृह परियोजना को लागू करने से गोरों तथा कालों के बीच तनाव घट गया और इसी प्रकार एक ही व्यवसाय में एक ही साथ काम करने पर गोरों की नकारात्मक मनोवृत्ति कालों के प्रति बहुत हद तक सकारात्मक बन गयी।

10.3.6 सामान्य लक्ष्य

किसी भी समूह या समाज को संगठित रखने तथा सदस्यों में सहयोग के भाव को बढ़ाने के लिए सामान्य लक्ष्य या लक्ष्यों का होना आवश्यक है। वाटसन (1942) ने कहा है कि जिस प्रकार चुम्बक लोहे के अलग अलग टुकड़ों को आपस में मिला देता है, उसी प्रकार सामान्य लक्ष्य सदस्यों की आपसी भिन्नताओं को मिटा कर उन्हें संगठित बना देता है। उनमें

एकता, एकात्मा, परस्पर निर्भरता तथा आवेष्टन के भाव विकसित हो जाते हैं, जिससे सामाजिक तनाव की संभावना समाप्त हो जाती है या काफी अंशों में घट जाती है। भारत में जातिगत तनाव, वर्ग तनाव तथा साम्प्रदायिक तनाव को रोकने के लिए राष्ट्रीय एकीकरण या राष्ट्रीय कल्याण को सामान्य लक्ष्य माना जा सकता है। यदि भारत के लोग इस लक्ष्य को प्राप्त करने की दिशा में प्रयत्नशील हो जायें तो ये सभी सामाजिक तनाव स्वतः दूर हो जायेंगे। हमारा यह अनुभव है कि पाकिस्तान या चीन की ओर से जब भारत पर आक्रमण हुआ तो भारत की अखण्डता को कायम रखना तथा प्रजातांत्रिक चरित्र को सुरक्षित रखना एक सामान्य लक्ष्य बन गया, जिसे प्राप्त करने के लिए हम सक्रिय हो गये और परिणामतः सामाजिक तनाव तथा अन्तः समूह संघर्ष के विविधरूप लुप्त हो गये।

10.3.7 आपत्तिजनक रीति-रिवाजों एवं परम्पराओं पर रोक

सामाजिक तनाव तथा समूह-तनाव को रोकने का एक उपाय यह है कि ऐसी लोकरीतियों, जिसे सामाजिक तनाव उत्पन्न होने की संभावना हो, उन पर रोक लगा दी जाए। जैसे- रामनौमी, मुर्हरम, आदि त्योहारों को रोक दिया जाए तो इसके कारण होने वाले सामाजिक तनाव तथा संघर्ष का निराकरण हो सकता है।

10.3.8 स्वस्थ राजनीति

सामाजिक तनाव एंव संघर्ष को रोकने या दूर करने के लिए स्वस्थ राजनीति बहुत आवश्यक है। गंदी राजनीति के कारण विभिन्न सामाजिक तनावों की उत्पत्ति होती है। विरोधी राजनैतिक दलों को चाहिए कि सत्ता दल के साथ स्वस्थ विरोध प्रकट करें और अपना उल्लू सीधा करने के लिए जातीयता, साम्प्रदायिकता तथा वर्ग-भाव को हवा न दें। दैनिक जीवन की घटनायें साक्षी हैं कि अधिकांश साम्प्रदायिक दंगे, जातिगत दंगे तथा वर्ग दंगे के पीछे विरोधी दलों का हाथ होता है। इसी प्रकार सत्ताधारी दल को चाहिए कि वह सत्ता का दुरुपयोग न करे और विरोधी दलों की उचित मांगों को स्वीकार करे तथा आवश्यकतानुसार उनका सहयोग ले। अतः राजनैतिक भ्रष्टाचार से होने वाले सामाजिक तनाव को रोकने या दूर करने के लिए आवश्यक है कि इस प्रकार के भ्रष्टाचार को दूर किया जाए जिसके लिए सत्ताधारी तथा विरोधी दलों का सहयोग आवश्यक है।

10.3.9 अनुकूल विधान

सामाजिक तनाव की रोकथाम या निराकरण के लिए सरकार द्वारा अनुकूल विधान का निर्माण आवश्यक है। कभी कभी ऐसी घटनाओं से सामाजिक तनाव या वर्ग-तनाव उत्पन्न होता है, जिसके समाधान के लिए कानूनी कदम आवश्यक प्रतीत होता है। वर्तमान समय में बाबरी मस्जिद को लेकर सारे भारत में हिन्दुओं और मुसलमानों के बीच साम्प्रदायिक तनाव जमा हो रहा है, जो कभी भी भागलपुर के दंगे (1989) की तरह अन्य दंगों के रूप में विस्फोट हो सकता है। यदि सरकार उस मस्जिदको विधान द्वारा हमेशा के लिए बन्द कर दे अथवा सरकारी मसरफ में ले ले तो शायद यह तनाव दूर हो जायेगा। यदि सरकार गोहत्या को विधान द्वारा गैरकानूनी घोषित कर देती तो साम्प्रदायिक तनाव एवं संघर्ष काफी अंशों में दूर हो जाता।

इस प्रकार स्पष्ट हुआ कि सामाजिक तनाव या सामूहित तनाव को रोकने या दूर करने के लिए उपर्युक्त कई विधियों या उपायों का उपयोग किया जा सकता है। स्मरण रखना चाहिए कि एक समय में एक से अधिक विधियों का उपयोग किया जा सकता है।

10.5 जातीय तनाव

विभिन्न जातियों के बीच जो तनाव पाया जाता है, उसे जातीय तनाव कहते हैं। जाति व्यवस्था स्पष्ट रूप से भारत में ही पाई जाती है। अतः इस सामाजिक तनाव का अधिक महत्व भारतीय समाज में ही है। उच्च हिन्दू जति में ब्राह्मण,

क्षत्रिय, कायस्थ, तथा भूमिहार मुख्य हैं। निम्न हिन्दू जाति में चमार, दुसाध, डोम, आदि मुख्य हैं। इन दोनों जातियों के मध्य हैं यादव, कुर्मी, अवधिया, कोयरी आदि।

जातीय तनाव मुख्य रूप से उच्च जाति तथा निम्न जाति के लोगों में पाया जाता है। इसका बुरा प्रभाव दोनाों जातियों पर पड़ता है। इसके साथ साथ समाज तथा राष्ट्र कमजोर बन जाता है। स्मरण रखना चाहिए कि जातीय तनाव भिन्न भिन्न उच्च जातियों के बीच भी होता है। उनके बीच भी जातीय दंगे होते हैं। इसी प्रकार निम्न जातियों के बीच भी तनाव तथा दंगे देखे जाते हैं। बिहार प्रान्त इस रोग से ज्यादा पीड़ित दिखता है।

10.5.1 जातीय तनाव के कारण अनेक हैं

(1) भारतीय जातीय व्यवस्था में ऊंच नीच के आलेखन से यह तनाव उत्पन्न होता है तथा बढ़ता है।

(2) उच्च जाति द्वारा निम्न जाति पर अत्याचार के कारण यह तनाव उभरता है।

(3) राजनैतिक नेता अपना उल्लू सीधा करने हेतु इस तनाव को हवा देते हैं।

(4) अज्ञानी तथा अनपढ़ लोगों में यह तनाव अधिक पाया जाता है।

(5) सरकार की अलगाव नीति के कारण भी यह तनाव बढ़ता है।

अत: जातीय तनाव के निराकरण तथा रोकथाम के लिए उपर्युक्त कारणों को नियंत्रित करना आवश्यक है।

10.5.2 जाति तनाव को कम करने के उपाय

ऊपर की विवेचनाओं के आधार पर हम जाति तनाव को कम करने के लिए कुछ उपायों की चर्चा निम्नलिखित रूप से करते हैं :

(1) शिक्षा : जाति तनाव को दूर करने क लिए उचित शिक्षा की व्यवस्था आवश्यक है। अज्ञानता के कारण भी जाति तनाव बढ़ता है। अत: शिक्षा के माध्यम से अज्ञानता को दूर करने से जाति संघर्ष या तनाव को कम किया जा सकता है। शिक्षा के द्वारा व्यक्तियों का निम्जातियों के प्रति सही जानकारी देने पर यह तनाव कम हो सकता है। इसके लिए उचित शिक्षा आवश्यक है। उचित शिक्षा का अर्थ यह है कि बच्चों को केवल ऐसी बातों की शिक्षा दी जाए जिससे किसी प्रकार के तनाव के उत्पन्न होने की संभावना नहीं हो। ऐसी बात की शिक्षा नहीं दी जाए जिनसे जातीय तनाव, वर्ग तनाव यासाम्प्रदायिक तनाव उभरने का अवसर मिले। अत: शिक्षा के माध्यम से जाति तनाव को क़म किया जा सकता है।

(2) "जाति" शब्द का कम से कम प्रयोग : व्यक्ति को हमेशा दूसरे व्यक्ति को मानव के समान समझना चाहिए। जाति तो मनुष्य बनाता है, परन्तु मानव को एक ही भगवान बनाताहै। अत: मनुष्य को जात-पात जैसे शब्दों को भूलना चाहिए। एक हिन्दू एक मुसलमान को रक्तदान करके, उसकी जान बचा सकताहै, लेकिन वह मुसलमान हिन्दू के रक्त से हिन्दू नहीं बन जाता है। हम ऐसे युग में हैं, जब लोग चाँद पर जा रहे हैं, और हम हैं कि धरती पर आपस में लड़ रहे हैं। अत: इस वैज्ञानिक युग में जात-पात के शब्द को शब्दावली कोश से निकाल फेंकना चाहिए।

(3) अन्तर्जातीय विवाह : जातीय तनाव को दूर करने के लिए व्यावहारिक उपाय अन्तर्जातीय विवाह भी है। उससे जाति तनाव कम हो सकता है। उसी प्रकार से अन्तर्धर्म विवाह से यानी हिन्दू और मुसलमानों के बीच शादी या विवाह से साम्प्रदायिक तनाव कम हो सकता है।

(4) आर्थिक समानता : जाति तनाव को कम करने के लिए देश से आर्थिक विषमता को समाप्त करना जरूरी है। आर्थिक संकट, आर्थिक पिछड़ापन आदि जब बढ़ जाता है तो जाति तनाव बढ़ने की भी संभावना होती है। यह सत्य है कि उच्च जाति के लोग निम्न जातियों से अधिक धनी हैं और यही कारण है कि निम्न जातियों में इन धनी व्यक्तियों के प्रति आक्रमणकारी एवं हिंसक व्यवहार तीव्र होता जा रहा है। दूसरी ओर निम्न जाति के लोग धनी व्यक्तियों के दमनकारी व्यवहारों से तंग आकर उनके प्रति विरोध की भावना अभिव्यक्त करते हैं। आर्थिक पिछड़ेपन के कारण जब निम्न जति या वर्ग के लोग अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति नहीं कर पाते हैं तो उनमें निराशा और कुण्ठा का भाव होता

है और यह जाति तनाव का रूप धारण करता है। अत: जाति तनाव को कम करने के लिए एक व्यापक पैमाने पर संघर्ष करना होगा। जबतक देश से आर्थिक विषमता समाप्त नहीं होगी यह जाति तनाव बना रेगा। आर्थिक माध्यमों के आधार पर निम्न जाति के व्यक्तियों को अधिक आर्थिक सुविधाएँ सरकार द्वारा प्राप्त करना चाहिए। भूमिहीन मजदूरों को भूमि देकर कृषि सुविधा प्रदान करना चाहिए। इस प्रकार यदि निम्न जातियों की आर्थिक स्थिति में सुधार हो जाता है तो उनके मन से संघर्ष और तनाव का बोझा भी समाप्त हो जाएगा।

(5) राज्य एवं केन्द्र सरकार ने भी जातीय तनाव को कम करने के लिए कुछ उपाय किये हैं, जिनमें

(क) आर्थिक,

(ख) सामाजिक,

(ग) शैक्षणिक,

(घ) धर्म एवं प्रचार का उपयोग प्रमुख है।

(6) जाति तनाव को कम करने के लिए उपनाम या कुलनाम को भी हटाने का उपाय बताया गया है। इसी प्रकार से एक दूसरे को देख कर प्रणाम करने के तरीके को भी बदलने का सुझाव दिया गया है। जैसे- ''जय राम जी'' ''पाए लागीं'' के स्थान पर ''जय हिन्द'' कहना।

अत: यदि हम चाहते हैं कि हमारे देश से जाति तनाव, सांम्प्रदायिक तनाव समाप्त हो तो हमें देश के विकास की ओर ध्यान देना चाहिए। भाईचारे की भावना को बढ़ाना चाहिए। गरीबी और बेरोजगारी को देश से समाप्त करना चाहिए।

10.6 साम्प्रदायिक तनाव

जाति तनाव के अलावा, दो समूह या समुदाय के बीच धार्मिक तनाव भी पाया जाता है। यह एक प्रकार की हठधर्मिता की मनोवृत्ति है जो एक समूह को दूसरे समूह से पूरी तरह से पृथक कर देती है। साम्प्रदायिकत परिभाषित करते हुए कहा गया है कि,भारतीय परिवेश में साम्प्रदायिक तनाव सबसे अधिक तीव्र एवं सबल सामाजिक तनाव है। भारत में साम्प्रदायिकता की नींव उस समय से पड़ी जब भारत पर मुसलमानों ने आक्रमण किया, लेकिन इस तनाव की मात्रा लगातार घटती और बढ़ती रही। विशेषकर अंग्रेजी शासनके समय सांप्रदायिकता को जानबूझकर भड़काया जाता था, क्योंकि अंग्रेजों ने ''अलगाव की नीति'' को अपनाया था। निर्वाचक मंडल का भी आधार धर्म को माना गया, परिणामस्वरूप मुस्लिम लीग की स्थापना हुई। इस दल के निर्माण होते ही 1942 में काफी खून खराबा हुआ, और 1947 में आजादी के बाद सारे देश में खून की नदियाँ बहने लगीं।

इस बात को सभी जानते हैं कि पूर्वाग्रह सांप्रदायिकता की जड़ होता है। इस प्रकार सांप्रदायिक तनावकी नींव प्राय: शैक्षणिक संस्थानों में पड़ती है और वहाँ से व्यक्ति सामाजिक दूरी और अलगाव की मनोवृत्ति को सीखता है। हिन्दू छात्र अपना अलग होस्टल चाहते हैं और मुसलमान छात्र अलग होस्टल चाहते हैं।

इस प्रकार का पूर्वाग्रह बच्चे शुरू से ही सीख लेते हैं, उनको बताया जाता है कि हिन्दू और मुसलमान दो अलग जातियाँ हैं। मुसलमान छात्रों को बताया जाता है कि हिन्दू '' काफिर'' होते हैं और हिन्दू छात्रों को भी यह शिक्षा दी जाती है कि ''मुसलमान गाय की हत्या करते हैं।'' इस प्रकार की शिक्षा जो शुरू से मुसलमान और हिन्दू बच्चों के मन में बैठा दी जाती है, उसको मिटाना बहुत ही कठिन होता है, बल्कि वह समय के साथ साथ अधिक सबल और स्थायी होती जातीं है। कभी कभी तो इस प्रकार की सांप्रदायिक मनोवृत्ति को संगठित रूप से भड़काया जाता है। उदाहरणस्वरूप आजादी मिलने से पहले ही मुस्लिम लीग ने हिन्दुओं के खिलाफ तरह तरह का प्रचार करके मुसलमानों को उनका शत्रु बनाने का प्रयास किया। 1947 के बाद एक पुस्तक ''मीट मिस्टर जिन्ना'' में स्वयं उन्हों ने कहा है कि, ''मुझको चाँदी की गोली दो, मैं युद्ध जीत कर दिखा सकता हूँ।'' इस प्रकार के प्रचार से हिन्दू और मुसलमानों के बची शत्रुता की एक बड़ी दीवार खड़ी हो गई और इस प्रकार देश का विभाजन भी हो गया। इस प्रकार के सांप्रदायिक प्रचार देश में खून-खराबे ने

सांप्रदायिक दलों को उभरने का अवसर प्रदान किया और यह सांप्रदायिक दल अभी भी देश में समय समय पर सांप्रदायिक दंगों की आग भड़का रहे हैं।

अत: कहा जा सकता है कि सांप्रदायिकता का अर्थ अपने संप्रदाय का हित चाहना और दूसरे सांप्रदाय अथवा संप्रदायों के हितों की उपेक्षा करना है। अत: इसी संप्रदायिकता से उत्पन्न भाव या विचार को संप्रदायिक तनाव कहा जाता है।

10.6.1 सांप्रदायिकत तनाव के कारण

सांप्रदायिकता के अनेक कारण हैं, इनमें से कुछ मुख्य कारणों की विवेचना निम्नलिखित रूप से की जाती है :

(1) **एक समुदाय को दूसरे समुदाय से खतरा :** हिन्दू और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिक तनाव का कारण एक दूसरे के बीच आपसी मतभेद हैं। अत: एक समुदाय को दूसरे समुदाय से निरन्तर खतरा की आशंका बनी रहती है। हिन्दू और मुसलमान के वस्त्र, उनके रहन सहन और जीवन शैली में अन्तर होता है। प्राय: वह एक दूसरे की रीति रिवाज से घृणा करते हैं, और यही प्रतिकूल मनोवृत्ति उनके बीच सांप्रदायिक तनाव का कारण बनती है। इसके साथ साथ दोनों समुदाय के धार्मिक विश्वास में भी अन्तर है। मुस्लिम समुदाय के लोग भी अपने धार्मिक विश्वास को लेकर हिन्दू समुदाय से घृणा की भावना रखते हैं और मुस्लिम समुदाय के लोग, हिन्दुओं को अपने लिए खतरा समझते हैं और उनके क्षेत्रों या उनकी कॉलोनी में रहना पसंद नहीं करते हैं। यही धारणा हिन्दुओं की भी मुसलमानों के प्रति है, जिस कारण दोनों समुदाय के बीच सांप्रदायिक तनाव की भावना उत्पन्न होती है।

(2) **ऐतिहासिक उत्तेजक घटनाएँ :** हिन्दू और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिक तनाव का एक मुख्य कारण अतीत की ऐतिहासिक घटनाएँ हैं। उन घटनाओं की जानकारी उनको इतिहास के अध्ययन से मिलती है। जिसको पढ़कर उनके मन में मुसलमानों के प्रति वैरभाव उत्पन्न होता है। मुसलमान प्रशासन के समय, मुस्लिम प्रशासन द्वारा हिन्दुओं पर किए गए अत्याचार की घटनाएँ आज भी अतिहास के पन्नों में सुरक्षित हैं, जिनके पढ़ने से हिन्दू समुदाय के लोग आज भी भड़क उठते हैं और उनके मन में मुसलमानों से बदला लेने की भावना उभरती है। अत: इस प्रकार की घटनाओं की जानकारी भी सांप्रदायिक तनाव का एक प्रधान कारण है।

(3) **दोनों समुदाय के बीच विरोधी धार्मिक विश्वास :** हिन्दू और मुसलमानों के धर्म के बीच स्पष्ट विरोधी विश्वास का संकेत मिलता है। उदाहरण स्वरूप हिन्दू मूर्ति की पूजा करते हैं, मुसलमान उसका विरोध करते हैं, कुछ मुसलमान तो अपने घरों में खिलौने भी नहीं रखते हैं, क्योंकि उनके अनुसार यह मूर्ति का संकेत है। इसके आलवा हिन्दू मंदिर को भगवान का निवास समझते हैं, दूसरी ओर मुसलमान उसको एक साधारण घर के रूप में लेते हैं। हिन्दू गाय, गंगा को पवित्र मानते हैं जबकि मुसलमान गाय को साधारण पशु और गंगा हो एक साधारण नदी के रूप में ही समझते हैं। अत: दोनों समुदाय के बीच धर्म का यह विरोधी विश्वास सांप्रदायिक तनाव का कारण बनता है।

(4) **सत्ता संघर्ष :** हिन्दू और मुसलमान समुदाय के बीच सत्ता और अधिकार को लेकर भी संघर्ष उत्पन्न होता है और यही संघर्ष आगे चलकर सांप्रदायिक तनाव का कारण होता है। उसी सत्ता की प्रेरणा ने देश का विभाजन कर दिया। जिन्ना और नेहरू के सत्ता के उत्साह ने हजारों लोगों का रक्तपात किया और देश को दो भागों में बांट दिया। अत: सत्ता की प्रेरणा भी सांप्रदायिक तनाव का कारण है।

(5) **देश का बंटवारा :** कुछ विचारकों के अनुसार देश का बंटवारा भी सांप्रदायिकता का कारण है। हिन्दू और मुसलमानों ने अपना तन, मन और धन लुटा कर देश को आजाद किया, मगर जब देश आजाद हुआ तो जिन्ना ने देश को "दो जाति सिद्धांत" की कल्पना के आधार पर पाकिस्तान की मांग की और इस प्रकार हिन्दू और मुसलमानों के बीच सांप्रदायिकता की एक बड़ी दीवार खड़ी कर दी गयी। इस संदर्भ में डा॰ अम्बेदकर ने देश के विभाजन से पहले लिखा था कि, "यदि विभाजन स्वीकार हो तो पाकिस्तान के बचे सभी हिन्दुओं और खंडित हिन्दुस्तान में बचे सभी मुसलमानों की अदला बदली करना चाहिए। इस प्रकार देश के बंटवारे ने हिन्दू और मुसलमानों में एक-जुटता, प्रेम-भाव और भाईचारे

की भावना पर एक भारी प्रहार किया।

(6) **अज्ञानता :** सांप्रदायिकता की भावना एवं तनाव को प्रोत्साहित करने में अज्ञानता की मुख्य भूमिका रही है। दोनों समुदायों के लोग एक दूसरे के प्रति सही जानकारी नहीं रखते हैं, अपने सरल ज्ञान के आधार पर वह एक दूसरे के प्रति गलत और वैरभाव की धारणा बना लेते हैं, जिससे सांप्रदायिकता की रूपरेखा तैयार होती है। इसके अलावा वह दूसरे के द्वारा सुनी गयी बातों या समाचार पत्रों या पत्रिकाओं में सांप्रदायिक लेखों को पढ़कर एक दूसरे के संबंध में सांप्रदायिक विश्वासों को अपना लेते हैं। जैसे कभी तो कुछ सांप्रदायिक दल के सिवा कुछ पत्रिकाएँ कुरान के कुछ सूत्रों का अर्थ गलत ढंग से प्रकाशित करके हिन्दुओं की भावनाओं को उत्तेजित करते हैं और इसका यह परिणाम होता है कि हिन्दू मूसलमानों को अपना शत्रु समझने लगते हैं। अगर ध्यान से दखा जाए तो कोई भी धर्म वैरभाव का उपदेश नहीं देता है। भारत के प्रसिद्ध कवि इकबाल ने कहा है, "मजहब नहीं सिखाता आपस में बैर रखना, हिन्दी हैं हम वतन हैं हिन्दुस्तां हमारा।" अत: अज्ञानता के कारण भी सांप्रदायिक तनाव उभरता है।

(7) **राजनैतिक दल :** भारत में आजादी के बाद विशेषकर पाकिस्तान की स्थापना के बाद कुछ ऐसे राजनैतिक दल उभरे जिन्होंने सत्ता को कमजोर करने और प्रजातंत्र को आघात पहुँचाने के लिए जनता में सांप्रदायिक भाव को उभारना शुरू किया। उनका उद्देश्य हिन्दू धर्म की रक्षा करना कभी नहीं होता है, वह केवल अपना उल्लू सीधा करना चाहते हैं। वह सांप्रदायिक दंगों के माध्यम से सत्ता को कमजोर कर स्वयं सत्ता में आना चाहते हैं। बाबरी मस्जिद की समस्या को खड़ा करनेवाले नेताओं का उद्देश्य कभी भी रामजन्म भूमि की रक्षा करना नहीं था, बल्कि मात्र दंगा और सांप्रदायिक भाव के माध्यम से प्रजातंत्र का कमजोर करना और हिन्दू समुदाय के मन में वैरभाव की भावना का जागरण करना था। शिव-सेना का भी यही उद्देश्य रहा है। अत: ऐसे राजनैतिक दल भी सांप्रदायिक तनाव के उत्तरदायी हैं।

(8) **दोषपूर्ण समाजीकरण :** सांप्रदायिकता का बीज बचपन में ही बोया जाता है। यदि परविार का वातावरण अनुकूल नहीं रहता है तो बच्चे अपने घरों से ही सांप्रदायिकता की भावनाओं एवं विश्वासों को सीखते हैं। कोई भी बच्चा जन्म के समय न तो हिन्दू रहता है और न मुसलमान। हिन्दू और मुसलमान की मोहर तो परिवार द्वारा ही लगायी जाती है और उसके बाद हम धीरे धीरे बच्चों में सांप्रदायिकता के विचारों को पक्का कर देते हैं। अत: दोषपूर्ण समाजीकरण भी सांप्रदायिक तनाव का कारण होता है।

(9) **दोषपूर्ण शिक्षा :** सांप्रदायिक तनाव का एक मुख्य कारण दोषपूर्ण शिक्षा भी है। स्कूल पाठशाला और मदरसों में शिक्षा पाने वाले बच्चों में सांप्रदायिकता अधिक पाई जाती है जो हिन्दू छात्रों को मुसलमानों के प्रति और मुसलमान छात्रों को हिन्दुओं के प्रति विरोधी बना देती है। उसी प्रकार मदरसा एवं मस्जिदों में ऐसी शिक्षा दी जाती है जो बच्चों को हिन्दुओं के प्रति विरोधी बना देती है। अत: दोषपूर्ण शिक्षा भी सांप्रदायिक तनाव का कारण है।

10.6.2 सांप्रदायिक तनाव को कम करने के उपाय

(1) **घर का स्वच्छ वातावरण :** सांप्रदायिक तनाव को कम करने के लिए घर के वातावरण को सुधारना जरूरी है। माता-पिता को चाहिए कि वह अपने घरों में सांप्रदायिक विषयों की चर्चा नहीं करें। इस प्रकार के सांप्रदायिक विचार-विमर्श से बच्चों के मन में सांप्रदायिक भावनाएँ उत्पन्न होती हैं। उनको चाहिए कि बच्चों की मनोवृत्ति को स्वस्थ बनायें और उनके मन में भेद-भाव की भावनाओं को विकसित नहीं होने दें। वे अपने बच्चों को धर्म की सही बातों एवं धर्म में सार्थक विचारों को समझायें। उनमें मानवता के प्रति प्रेम, स्नेह और सहयोग की भावनाओं को प्रोत्साहित करें। ऐसे दृष्टिकोण से बच्चों में सांप्रदायिक तनाव की भावना उत्पन्न नहीं होगी।

(2) **उत्तेजित जुलूसों पर प्रतिबंध :** कभी कभी रामनौमी और मुहर्रम के उत्तेजित जुलूसों के कारण सांप्रदायिक तनाव उत्पन्न होता है। उन जुलूसों में प्राय: असामाजिक तत्व होते हैं जो दूसरे समुदाय के मकानों या उनके क्षेत्रों में आपत्तिजनक नारा लगाते हैं, जिससे उस समुदाय की भावनाओं को आघाता पहुँचता है और उनमें सांप्रदायिक तनाव होता

है। अत: सांप्रदायिक तनाव को कम करने के लिए जुलूसों पर सरकार को प्रतिबंध लगा देना चाहिए। ऐसा ही जुलूस मोहर्रम में लखनऊ में शिया एवं सुन्नी समुदाय के बीच सांप्रदायिक भावनाओं को उत्पन्न करता था, जिसको उत्तर प्रदेश की सरकार ने कई वर्षों तक बन्द कर दिया था।

(3) **दोषपूर्ण शिक्षा व्यवस्था :** सांप्रदायिकता को कम करने के लिए वर्तमान शिक्षा पद्धति में परिवर्तन लानेकी आवश्यकता है। धार्मिक शिक्षा संस्थानों में शिक्षा पाने वाले छात्रों के मन में सांप्रदायिकता की धारणा को पक्का कर दिया जाता है। अत: ऐसे संस्थानों पर पूरी तरह से सरकार को प्रतिबंध लगा देना चाहिए। धर्म के नाम पर पाठशाला, मन्दिरों, मदरसों, मस्जिदों या गुरुद्वारों में सांप्रदायिकता को रोकने की उचित व्यवस्था करनी चाहिए। इस प्रकार की रोकथाम से भी सांप्रदायिक तनाव कम हो जाता है।

(4) **सामान्य लक्ष्य :** सांप्रदायिक तनाव को कम करने के लिए एक उपाय यह भी है कि लोगों के लिए सामान्य लक्ष्य को निश्चित किया जाए। सामूहिक लक्ष्य होने पर सामूहिक चिन्ता ग का विकास होगा, और वैयक्तिक चिन्तनध ारा कमजोर हो जायेगी और इस प्रकार विभिन्न समूहों के बीच एकता, सहयोग, एकात्मकता तथा हम की भावना उभरेगी। इस प्रकार सांप्रदायिकता का भाव कम होगा।

(5) **समान नागरिक संहिता :** सांप्रदायिक तनाव को कम करने के लिए समान नागरकि संहिता होना जरूरी है। सरकार तथा समाज को चाहिए क उस संहिता को कड़ाई से पालन करने पर बल दे। हिन्दुओं, मुसलमानों तथा सिक्खों के लिए अलग अलग संहिता नहीं होनी चाहिए। ऐसा करने से भी सांप्रदायिक तनाव कम हो सकता है।

(6) **स्वस्थ राजनीति :** सांप्रदायिकता को समाप्त करने के लिए राजनीति का स्वस्थ होना जरूरी है। गन्दी राजनीति ही संप्रदायिकता को प्रोत्साहित करती है। अत: सत्तादल तथा विरोधी दलों को चाहिए कि अपने राजनैतिक हितों के लिए सांप्रदायिकता को उत्साहित न करें। उन्हें चाहिए कि राष्ट्रीय हित को ध्यान में रखकर, सांप्रदायिकता की रोकथाम करें। अत: स्वस्थ राजनीति के आधार पर भी सांप्रदायिकता को कम किया जा सकता है।

(7) **भारतीयकरण :** कुछ लोगों का कहना है कि सांप्रदायिकता का एकमात्र उपचार भारतीयकरण है। यह एक अस्पष्ट शब्द है। कुछ लोगों ने इस शब्द को गलत अर्थ में लिया है और उन्होंने इस शब्द का अर्थ "हिन्दूकरण" के रूप में लिया है। लेकिन भारतीयकरण का सही अर्थ यह है कि पहले हम हिन्दुस्तानी हैं तब बाद में हिन्दू, मुसलमान और सिक्ख हैं। हमें याद रखना चाहिए कि इकबाल ने कहा था कि - "हिन्दी हैं हम वतन हैं, सारा जहाँ हमारा।" यही भारतीयकरण का सही अर्थ और सही रूप है।

(8) **वैधानिक उपाय :** सांप्रदायिक तनाव को समाप्त करने के लिए सरकार को चाहिए कि वह आवश्यक कानूनी कार्रवाई करे। इस संदर्भ में कई उपायों को अपनाया हा सकता है :

(क) जिन घटनाओं या कार्यों से सांप्रदायिकता उत्तेजित होती हो उन पर प्रतिबंध लगा देना चाहिए।

(ख) जिन क्षेत्रों में सांप्रदायिक दंगे हों, वहाँ सामूहिक दण्ड कर लगाना चाहिए।

(ग) सांप्रदायिक तनाव बढ़ाने वाले व्यक्ति को कड़ी सजा दी जाए।

(घ) सांप्रदायिक दंगे में जाल-माल के नुकसान को सरकार अधिकृत समूह पूरा करे।

(ड.) संवेदनशील इलाकों में स्थाई तटस्थ पुलिस की व्यवस्था की जाए।

(च) जिन क्षेत्रों में दंगा की संभावना हो वहाँ पूरी सावधानी बरती जाए।

इस प्रकार सरकार द्वारा भी सांप्रदायिक तनाव को कम किया या रोका जा सकता है।

10.7 क्षेत्रीय तनाव का प्रत्यय या संकल्पना

क्षेत्रीय तनाव की व्याख्या करने से पहले क्षेत्रीयता के संकल्पना का वर्णन करना जरूरी है। क्षेत्रीयता एक जटिल संकल्पना है। इसकी परिभाषा विभिन्न समाज शास्त्रियों ने अलग अलग रूप में दी है। उनमें से कुछ ने क्षेत्रीयता को वर्ल्ड

फेडेरेशन तथा मध्यवर्ती विकेन्द्रित प्रशासन के रूप में माना है।

क्षेत्रीयता का संबंध विविध समस्याओं से होता है, जिन में राजनैतिक, सांस्कृतिक, जीवन को शामिल किया जा सकता है। इसका मुख्य आधार प्रशासन का विकेन्द्रीकरण है। इस दृष्टिकोण से आत्म-अधिकारी प्रशासन की कल्पना की जा सकती है। इसका उद्देश्य भूमि के पुत्र की भावनाओं से है। क्षेत्रीयता की भावनाओं की अभिव्यक्ति क्षेत्रीय भक्ति से भी होती है।

डंकन एवं फॉरेस्टर ने क्षेत्रीयता को परिभाषित करते हुए कहा है कि "इसी प्रकार से कुछ समाजशास्त्रियों का विचार है कि क्षेत्रीयता अपने क्षेत्र भक्ति का एक मुख्य उद्देश्य अपनी सांस्कृतिक परंपराओं या कुल परंपराओं की सुरक्षा की भावना है। क्षेत्रीयता जनता को राष्ट्र की विचारधाराओं से अलग करने का एक माध्यम है।"

इस अलगाव की भावना का विकास, सत्ता की सरकार द्वारा केन्द्रीकरण पर अधिक बल देने के कारण है।

यदि हम ऊपर की गई क्षेत्रीयता की संकल्पना का ध्यानपूर्वक विश्लेषण करें तो हम बहुत आसान के साथ क्षेत्रीय तनाव के कारणों का पता चला सकते हैं।

10.7.1 क्षेत्रीयता के कारण

क्षेत्रीय तनाव के कारणों को अनेक कारक प्रभावित करते हैं, जैसे :

(क) ऐतिहासिक कारक,

(ख) वातावरण से संबंधित कारक,

(ग) सांस्कृतिक कारक,

(घ) राजनैतिक कारक,

(ड.) भाषा विभेद कारक,

(च) मनोवैज्ञानिक कारक।

इन सभी कारकों का प्रभाव क्षेत्रीय तनाव के विकास को उत्साहित करते हैं, जिनकी विवेचना निम्नलिखित रूप से की जाती है।

(क) **ऐतिहासिक कारक** : इतिहास के अध्ययन से अतीत की उत्तेजक क्षेत्रीय तनाव की घटनाओं का पता चलता है। इतिहास के पन्नों में अभी भी अतीत के क्षेत्रीय तनाव की घटनाएँ सुरक्षित हैं। इन घटनाओं के अध्ययन से विभिन्न समुदाय के सदस्यों के बीच सामाजिक दूरी बढ़ती है और आगे चलकर यही सामाजिक दूरी क्षेत्रीय तनाव का रूप धारण करती है। इन अध्ययनों से यह भी स्पष्ट होता है कि किस प्रकार विभिन्न क्षेत्रें के निवासियों ने हमेशा अपनी संस्कृति, कुल परंपरा, भाषा, जीवन शैली को बनाए रखने का संघर्ष किया है। इस प्रकार विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच अपनी संस्कृति परंपरा की प्रधानता को व्यक्त करने का प्रयास किया है, जो विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच क्षेत्रीय तनाव का कारण बना।

(ख) **वातावरण संबंधी कारक** : प्राय: वातावरण संबंधी कारक भी क्षेत्रीय तनाव का कारण बनते हैं। कुछ समाजशास्त्रियों ने इसको "इनभिरॉन्मेंटल कम्पलेक्स" भी कहा है। इस दिशा में विभिन्न क्षेत्रों के रहन सहन, उन्नत कृषि, उद्योगीकरण, नागरीकरण के प्रभाव स्वरूप भी क्षेत्रीय तनाव की उत्पत्ति होती है।

(ग) **सांस्कृतिक कारक** : सांस्कृतिक कारकों को भी क्षेत्रिय तनाव का कारण माना जा सकता है। ऐसा माना जाता है कि संस्कृति सामाजिक दूरी का एक मुख्य निर्धारक है। विभिन्न क्षेत्रों के समूह अपने उपसमूहों की संस्कृति का अन्त:करण कर लेते हैं और इसके साथ ही अपनी स्वतंत्र पहचान की मांग करते हैं। अत: कुछ ऐसे सांस्कृतिक तत्व, जो क्षेत्रीय तनाव को प्रोत्साहित करते हैं, इनमें विभिन्न क्षेत्रों के व्यक्तियों की आर्थिक स्थिति, उनकी जीवन शैली एवं विभिन्न संस्थानों का उल्लेख किया जा सकता है। इन तत्वों की भिन्नता के कारण विभिन्न समाज के लोगों में एक विशेष प्रकार

की मानसिक वृत्ति का विकास होता है जो उनका दूसरे क्षेत्र के समूह अथवा समुदाय के प्रति तनाव की स्थिति को प्रोत्साहन देता है।

(घ) **राजनैतिक कारक :** क्षेत्रीय तनाव को उत्पन्न करने में राजनैतिक कारकों की मुख्य भूमिका होती है। यह बात उल्लेखनीय है कि आजादी के बाद से आज तक अंतर अथवा भीतरी क्षेत्रीय तनाव की स्थिति बढ़ती जा रही है। राजनैतिक नेता जनता की माँग, उनकी कठिनाइयों, समस्याओं का समाधान करने में विफल रहे हैं। इससे उत्पन्न संघर्ष एवं कुण्ठा के कारण, जनता को अपनी संस्कृति, कुल परंपराओं, अपनी विशिष्ट पहचान को खो बैठने का भय उत्पन्न हो गया है। अतः इस असुरक्षा की भावना ही उनके क्षेत्रीय तनाव का कारण हैं। पाकिस्तान के संदर्भ में भी राजनीति की क्षेत्रीय तनाव में मुख्य भूमिका रही है। पाकिस्तान के जन्मदाता की मृत्यु के बाद भी पाकिस्तान में क्षेत्रीय तनाव का जहर फैलता रहा, यहाँ तक कि दिसम्बर 1971 में क्षेत्रीय तनाव ने ऐसा रूप लिया कि बंगला देश उभरा और जिन्ना साहेब के "दो जाति" सिद्धांत पर पानी फिर गया। क्षेत्रीय तनाव ने पाकिस्तान में ऐसा गंभीर रूप धारण किया कि वहाँ पंजाब, पखतून और बलूची क्षेत्रीय समस्या स्पष्ट रूप से उभरी।

(ड.) **भाषा संबंधी कारक :** भाषा विभेद भी क्षेत्रीय तनाव की जड़ मानी जा सकती है और इसी भाषण विभेद को लेकर भारत में विभिन्न राज्य की मांग की गयी जिसको दार आयोग ने रद्द कर दिया, जिसके फलस्वरूप देश में दंगे और हिंसक घटनाएँ हुई। भाषा के इस आंदोलन को एक सांस्कृतिक, सामाजिक, आर्थिक आंदोलन भी कहा जा सकता है। इस भाषा आन्दोलन के कारण आन्ध्र प्रदेश में अनेकों हिंसक घटनाएँ और खून-खराबा हुआ।

उधर पश्चिमी बंगाल ने संथाल परगना को अपने में शामिल करने की मांग की मगर बिहार के मुख्य मंत्री ने इसको खारिज कर दिया, क्योंकि इस जिला में लगभग 45.8 प्रतिशत संथाली और 41.8 प्रतिशत लोग हिन्दी भाषा जानने वाले थे।

झारखण्ड आन्दोलन ने भी भाषा अपनी संस्कृति, रीति-रिवाज जैसी समस्या को लेकर क्षेत्रीय आन्दोलन छेड़ा और अलग झारखण्ड राज्य की मांग की। इस आन्दोलन के कारण भी क्षेत्रीय तनाव काफी बढ़ा और छोटानागपुर के भिन्न जिलों में अनेकों हिंसक घटनायें हुई।

भाषा के मतभेद ने भारत के भिन्न क्षेत्रों को प्रभावित किया और इस देश के निवासियों को ऐसा खतरा पैदा होने लगा कि यदि भाषा के आधार पर अलग अलग राज्यों की मांग की गयी तो यह देश छोटे छोटे टुकड़ों में बंट जाएगा। इस भावना ने भारत के निवासियों में अलगाव की स्थिति को उभारा। इसके अलावा भारत के विभिन्न राज्य के लोगों में राष्ट्रभाषा हिन्दी को वैध स्तर देने को लेकर भी अनेक राज्यों में क्षेत्रीय तनाव देखे गए। विशेषकर ऐसे राज्य जहाँ के लोग हिन्दी नहीं बोलते हैं, वहाँ सबसे अधिक प्रभाव पड़ा। इसी संदर्भ में झारखण्ड संयुक्त समिति ने पश्चिमी बंगाल की सरकार के सामने यह प्रस्ताव रखा कि विश्वविद्यालय में क्षेत्रीय भाषा की पढ़ाई एवं शोधकार्य की व्यवस्था की जाए अथवा संथाली, मुंडारी, कुर्माली भाशा के लिए भी विभागों की स्थापना की जाए।

(च) **आर्थिक कारक :** क्षेत्रीय तनाव को आर्थिक कारक भी प्रभावित करता है। जब समाज में आर्थिक विषमता, आर्थिक संकट, आर्थिक पिछड़ेपन अधिक बढ़ जाता है तो विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच क्षेत्रीय तनाव उत्पन्न होता है। जैसे कि हमलोगों ने देखा कि आर्थिक संकट ने ही पाकिस्तान को अपने एक भाग से अलग कर दियाऔर बंगला देश की स्थापना हुई। झारखण्ड आन्दोलन का भी यही उद्देश्य है। झारखण्ड क्षेत्र के निवासी अपने को आर्थिक रूप से वंचित समझते हैं। उनका विचार है कि उनके क्षेत्र से पूरे बिहार को आमदनी का एक बड़ा हिस्सा मिलता है, जबकि झारखण्ड क्षेत्र की जनता आर्थिक सुविधाओं से वंचित है। यहाँ के लोग गरीबी और बेरोजगारी का जीवन बिता रहे हैं। अतः आर्थिक कारक भी क्षेत्रीय तनाव को जन्म देता है।

(छ) **मनोवैज्ञानिक कारक :** क्षेत्रीय तनाव उत्पन्न करने में मनोवैज्ञानिक कारकों की मुख्य भूमिका होती है। इस कारक की व्याख्या करने से पता चलता है कि अधिकांश व्यक्ति अपने क्षेत्र से ही प्रभावित होते हैं और इसी आधार पर

उनकी जीवन शैली, मनोवृत्ति, विश्वास एवं व्यवहार प्रतिरूपों का भी विकास होता है। अत: वह अपनी पाहचन तथा संस्कृति एवं कुल परंपरा को बनाए रखने का संघर्ष करते हैं। यदि किसी दूसरे क्षेत्र के व्यक्ति उनके रहन सहन, संस्कृति आदि पर किसी प्रकार की टिप्पणी करते हैं, तो यह उनके लिए क्षेत्रीय तनाव का एक मनोवैज्ञानिक कारण माना जा सकता है। प्राय: ऐसा भी देखा गया है कि एक क्षेत्र के समूह दूसरे क्षेत्र के समूह के प्रति प्रधानता ग्रंथि रखते हैं और एक दूसरे के प्रति यही प्रधानता की भावना क्षेत्रीय संघर्ष का कारण बनती है। किन्तु कभी कभी यह प्रधानता की भावना वास्तविक भी होती है, जैसे- कुछ क्षेत्र के लोग दूसरे क्षेत्र के लोगों, समूह अथवा समुदाय से साहित्य, साक्षरता कला, विज्ञान, राजनीति, वैज्ञानिक उपलब्धि में दूसरे क्षेत्र से बहुत आगे रहते हैं। अर्थात् इस कारण भी विभिन्न क्षेत्रों के लोगों के बीच क्षेत्रीय तनाव होता है। उदाहरणस्वरूप पंजाब के लोग अपने को दूसरे क्षेत्र के लोगों से अधिक प्रधान समझते हैं, और अन्य क्षेत्रों के लोगों की अपेक्षा अधिक चतुर समझते हैं। उसी प्रकार से बंगाल के निवासी अपने को अधिक सभ्य, सुसंस्कृत समझते हैं। इस प्रकार विचारों के मतभेद के कारण विभिन्न क्षेत्र के लोगों के बीच निरंतर तनाव बना रहता है।

10.7.2 क्षेत्रीय तनाव को कम करने के उपाय

जहाँ तक क्षेत्रीय तनाव को कम या दूर करने का प्रश्न है तो कोई भी व्यक्ति यह सुझाव दे सकता है कि राष्ट्रीय एकीकरण की भावना ही इस देश के निवासियों को क्षेत्रीय तनाव से बचा सकती है। राष्ट्र से तात्पर्य विभिन्न प्रजातियों के व्यक्तियों के एक ऐसे समूह से है जिसका अपना एक स्वतंत्र भूखंड होता है तथा जिसके सदस्यों में लगभग विचार, भाव, समान भाषा एवं समान उद्देश्य होता है। अत: यदि देश के निवासियों में उस एकता एवं अखंडता की भावना को प्रोत्साहित किया जाए तो बहुत हद तक क्षेत्रीय तनाव कम हो सकता है। भारत के प्रसिद्ध कवि इकबाल ने कहा था, "हिन्दी हैं हम वतन हैं, सारा जहाँ हमारा।"

इसके अलावा राष्ट्रीय धन एवं सम्पत्ति का उचित बंटवारा क्षेत्रीय तनाव को कम कर सकता है। देश से क्षेत्रीय तनाव को कम करने के लिए उचित शिक्षा, पारस्परिक संपर्क, सामाजिक सुधार, स्वस्थ समाजीकरण का प्रचार आदि तरीकों को अपना कर भी क्षेत्रीय तनाव को कम किया जा सकता है।

10.8 मनोवृत्ति संगठन का प्रत्यय या संकलन

मनोवृत्ति कम या अधिक रूप से तत्परता की एक सामान्य अवस्था है। यह निश्चित पता नहीं चल पाया है कि बच्चों में मनोवृत्ति की प्रक्रियाओं का विकास किस प्रकार होता है, परन्तु मनोवृत्ति का विकास विभिन्न अवस्थाओं में होता है, और अन्त में यह संघटित हो जाता है। प्रारंभिक अवस्था में बच्चों में अनुकूल और प्रतिकूल मनोवृत्ति के बीच अन्तर स्थापित नहीं कर पाता है, यानी अनुकूल और प्रतिकूल दोनों प्रकार की मनोवृत्तियाँ उसके लिए समान होती हैं। यहाँ पर अनुकूल मनोवृत्ति का अर्थ "अच्छे" तथा प्रतिकूल मनोवृत्ति अर्थ 'बुरे' से लिया जा सकता है। किन्तु बच्चों में एक विशेष एवं प्रतिकूल मनोवृत्ति का विकास कई अवस्थाओं को पार करके होता है। बच्चों में अनुकूल मनोवृत्ति का निर्माण विभेदीकरण की क्रिया का आधार पर होता है। जिस प्रकार से क्रियात्मक व्यवहार और प्रत्यक्षीकरण एक सामान्य दिशा की ओर परिमार्जित होता है, उसी प्रकार से मनोवृत्ति की प्रक्रिया संगठन के आधार पर एक निश्चित दिशा की ओर होती है।

अत: संगठन के परिणामस्वरूप विभिन्न वस्तुओं और व्यक्तियों के प्रति मनोवृत्ति स्पष्ट होती हैं। उदाहरणस्वरूप एक 10 वर्ष के बच्चे की मनोवृत्ति अपनी माँ, अपने कुत्ते या किसी फुटबाल के खिलाड़ी के प्रति अनुकूल हो सकती है। मगर, यहाँ पर ध्यान देने योग्य बात यह है कि बच्चा पहले से ही इन सभी के प्रति अलग अलग रूप से प्रेरित रहता है। माँ से वह प्रेम की आशा करता है, कुत्ते की रक्षा, खिलाड़ी के प्रति रुचि रखता है। इस प्रकार उसकी मनोवृत्ति और प्रेरणा के मेल से उसकी भिन्न वस्तुओं के प्रति मनोवृत्ति का संगठन होता है।

अब हम मनोवृत्ति संगठन के प्रत्यय को एक दूसरे उदाहरण से समझने का प्रयास करेंगे। एक नवजात शिशु विभिन्न व्यक्तियों के बीच अन्तर स्थापित नहीं कर पाता है। वह सभी व्यक्तियों को संतोष का स्रोत समझता है। उसकी मनोवृत्ति

इन सभी व्यक्तियों के प्रति अनुकूल या सामान्य रहती है। कुछ महीने में वह अपनी माँ के प्रति अनुकूल मनोवृत्ति स्थापित कर लेता है और उस पर निर्भर करने लगता है। कुछ वर्षों के बाद वह स्पष्ट रूप से दूसरों को अलग अलग रूप से पहचानने लगता है। इस प्रकार वह विभिन्न श्रेणियों के सदस्यों के प्रति एक निश्चित मनोवृत्ति स्थापित कर लेता है। लेकिन, इन प्रक्रियाओं में अधिक समय लगता है और अंतत: उसमें कुछ व्यापक प्रतिरूपों का भी विकास होता है।

वास्तव में मनोवृत्ति संगठन से तात्पर्य मनोवृत्ति का एक दूसरे से संबंधित होना होता है। मनोवृत्ति एक दूसरे से क्रमबद्ध रूप से संबंधित होती है, न कि आकस्मिक रूप में। वस्तुत: मनोवृत्ति का यह पारस्परिक आश्रय आंशिक होता है, न कि पूर्ण। परन्तु हर व्यक्ति की मनोवृत्ति क्रमबद्ध रूप से संबंधित नहीं होती है। ऐसा हो सकता है कि व्यक्तियों की मनोवृत्तियों का संबंध अनेक मनोवृत्तियों से हो, फिर भी संबंध प्राय: आंशिक होते हैं।

मनोवृत्ति संगठन के संदर्भ में कुछ नियमों की चर्चा की गयी है, जिसमें संबंध होने की मुख्य भूमिका होती है। यह नियम मनोवृत्ति संगठन के लिए सहायक है। इस नियम के अनुसार मनोवृत्ति संगठन, समान मनोवृत्ति के आधार पर होता है। जैसे- समान चिन्ह जिनको व्यक्ति संगठित समझता है।

मनोवृत्ति संगठन का आधार वस्तु संबंध भी होता है, जैसा कि ऑडर्नो आदि के अध्ययन से भी ज्ञात होता है। इस अध्ययन के अनुसार यदि किसी समाज के सदस्यों, यहूदियों के प्रति पूर्वाग्रहित होते हैं, तो वह दूसरे समुदाय, जैसे- ईसाई, जापानी, मेकसिकन, निगरो आदि के प्रति भी प्रतिकूल मनोवृत्ति रखते हैं। यहाँ पर वस्तु संबंध का समानीकरण होता है, अर्थात् वह सभी अल्पसंख्यक वर्ग के प्रति पूर्वाग्रह का प्रदर्शन करता है।

कभी कभी दो या अधिक वस्तुओं के बीच पारस्परिक सहयोग भी मनोवृत्ति संगठन का आधार बनता है। प्राय: एकतरफा संबंध भी मनोवृत्ति संगठन का रूप लेता है।

इसी प्रकार से मनोवृत्ति समान होती है, और बराबर समान रहती है। इस प्रकार से कि जब एक में परिवर्तन होता है तो दूसरे में भी परस्पर रूप से परिवर्तन होता है तो इस प्रकार का संबंध मनोवैज्ञानिक संगठन का आधार बनता है।

व्यक्तियों की मनोवृत्ति का संगठन विभिन्न रीतियों के आधार पर भी होता है। इन रीतियों का संबंध प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति की मनोवृत्तियों से होता है। इसके साथ ही इन रीतियों का व्यक्ति की मनोवृत्ति से अन्त:संबंध होता है। इन रीतियों की सक्रियता जो भिन्न परिस्थितियों में होती है उनका संबंध सामान्य तत्व से होता है। अत: इन रीतियों के आधार पर मनोवृत्ति का संगठन होता है। इस धारणा को एक उदाहरण से स्पष्ट किया जा सकता है। एक स्कूल का छात्र विभिन्न मनोवृत्ति, जैसे- अपने पिता, अपने जेब खर्च की मांग, उसक परिवार में मोटर कार का खर्च, परिवार के अन्य सदस्यों की जरूरतों पर खर्च- इन सभी मनोवृत्ति के बीच "मुद्रा" के सामान्य तत्व हैं, जिसके आधार पर उस छात्र की मनोवृत्ति संघटित होती है। अत: उसकी एक निश्चित मनोवृत्ति अपने पिता और परिवार के अन्य सदस्यों के प्रति स्थापित होती है। अर्थात् उसकी मनोवृत्ति का संगठन सामान्य तत्व के आधार पर होता है।

कभी कभी व्यक्ति की संपूर्ण मनोवृत्ति एक साथ एकत्र हो जाती है और इस आधार पर भी मनोवृत्ति का संगठन होता है।

प्राय: संज्ञानात्मक क्रियाओं के आधार पर भी मनोवृत्ति का संगठन होता है। जिस प्रकार से एक संज्ञान दूसरे संज्ञान से मात्रा से भिन्न होता है, उसी प्रकार से एक मनोवृत्ति दूसरी मनोवृत्ति से मात्रा में भिन्न होती है। उदाहरण स्वरूप एक व्यक्ति की मनोवृत्ति आयकर के प्रति विरुद्ध हो सकती है, किन्तु उसी व्यक्ति की मनोवृत्ति दूसरे आर्थिक क्षेत्र, जैसे- मुद्रा का घटता मूल्य या निजी व्यवसाय के प्रति भिन्न हो सकती है। अत: उसकी मनोवृत्ति की दिशा कुछ अंशों में संघनात्मक क्रिया के आधार पर दूसरी मनोवृत्ति से मात्रा में भिन्न हो जाती है।

कभी कभी ऐसा भी देखा जाता है कि एक व्यक्ति की मनोवृत्ति उसकी अन्य मनोवृत्तियों से संबंधित होकर संघटित हो जाती है। उदाहरणस्वरूप एक व्यक्ति की रोमन कैथोलिक गिरजाघर के प्रति मनोवृत्ति के साथ उसकी अन्य मनोवृत्तियों, जैसे- राजनैतिक व्यवस्था, विज्ञान, कला, कविता, पारिवारिक संबंध के प्रति मनोवृत्ति से संबद्ध संघटित एंव रचित

हो जाती है।

किन्तु कुछ मनोवृत्तियाँ ऐसी हैं जिनका अस्तित्व एक दूसरे से पृथक एवं अलग होता है। फिर भी उनमें से अधिकांश एक दूसरे से गुंच्छित हो जाती हैं, जिनसे उस व्यक्ति के व्यक्तित्व की एकता का बोध होता है। अतः बहुत कम ही ऐसा होता है कि एक मनोवृत्ति से पूर्णतः पृथक हो ओर यही कारण है कि किसी व्यक्ति का जीवन दर्शन किसी एक वस्तु तक सीमित नहीं रहता है। उस व्यक्ति की राजनैतिक, विज्ञान, कला, के प्रति मनोवृत्ति को पृथक तो किया जा सकता है, लेकिन उनके संघटित होने की संभावना को समाप्त नहीं किया जा सकता है।

उसके साथ ही ऐसा अनुमान नहीं करना चाहिए कि व्यक्ति के जीवन के विभिन्न क्षेत्रों जिनका हम अलग अलग स्पष्ट नाम से संबोधित करते हैं, उन क्षेत्रों से संबद्ध मनोवृत्तियाँ समरूप हों। यह संभव है कि एक व्यक्ति की गुंच्छित मनोवृत्ति के अन्तर्गत विषम मनोवृत्ति भी वर्तमान हों। जैसे- उसमें कुछ धार्मिक कुछ राजनैतिक और कुछ वैज्ञानिक मनोवृत्तियाँ भी अलग अलग हों।

फरगुसन (1939) के प्राथमिक सामाजिक मनोवृत्ति को पृथक करने का प्रयास मनोवृत्ति संगठन का एक उदाहरण माना जा सकता है। उन्होंने 10 थर्सटन मापनी को विश्वविद्यालय के छात्रों के 185 प्रतिदर्श पर लागू किया। इन मापनियों का उद्देश्य भगवान की वास्तविकता अपराधियों के प्रति व्यवहार, मृत्यु दण्ड, सांप्रदायिकता के प्रति मनोवृत्ति का मापन करना था। उन्होंने उन सभी विषयों के प्रति मनोवृत्ति को तीन श्रेणियों में गुंच्छित किया और प्राथमिक गुच्छे को उन्होंने धर्मवाद, मानवतावाद एवं राष्ट्रीयता के नाम से संबोधित किया।

धर्मवाद के अन्तर्गत उन्होंने विकास, भगवान की वास्तविकता एवं परिवार नियोजन की मनोवृत्ति को लिया मानवतावाद की श्रेणी में उन्होंने मृत्युदण्ड, अपराधियों से व्यवहार, युद्ध के प्रति मनोवृत्ति को शामिल किया। राष्ट्रीय में उन्होंने सांप्रदायिकता, प्रतिरोध एवं देशभक्ति की मनोवृत्ति को लिया। अतः इस दृष्टिकोण के अनुसार, व्यक्ति की मनोवृत्ति जिनको अलग अलग श्रेणियों में बांटा गया है, वह आपस में परस्परसंबंधित हैं, अर्थात् संगठित हैं।

मनोवृत्ति संगठन की व्याख्या संतुलन के नियम के आधार पर भी की जा सकती है। किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति किस प्रकार संगठित होती है, यह वास्तव में उसकी मनोवृत्ति के स्थाई एवं संतुलित होने पर निर्भर करता है।

Newcomb के शब्दो में, "According to the principle of balance attitude toward object is viewed as belonging together tend to become congruent. Congruence is a balanced condition and as long as it is maintained, attitude remains organised and integrated."

अतः संतुलन की अवस्था जब तक बनी रहती है, व्यक्ति की मनोवृत्ति स्थाई और संगठित रहती है।

10.8.1 मनोवृत्ति संगठन का महत्त्व

मनोवृत्ति संगठन के निम्नलिखित महत्व हैं :

(1) मनोवृत्ति संगठन व्यक्तियों को विविध सूचनाओं को संगठित एवं उसकी व्याख्या करने में सहायक होता है। इसको ज्ञान कार्य कहा जाता है।

(2) मनोवृत्ति संगठन द्वारा व्यक्ति को अपने विचारों एवं विश्वासों को सही ढंग से अभिव्यक्त करने का अवसर मिलता है। इसको आत्म-अभिव्यक्ति कार्य कहा जाता है।

(3) मनोवृत्ति संगठन का महत्व संज्ञानात्मक विश्लेषण के दृष्टिकोण से महत्वपूर्ण माना जाता है। इसके द्वारा व्यक्ति विभिन्न सूचनाओं के आधार पर अपनी मनोवृत्ति में परिवर्तन ला सकता है।

(4) मनोवृत्ति संगठन किसी व्यक्ति की मनोवृत्ति को या जिस वस्तु या विषय के प्रति उसकी विशेष मनोवृत्ति है उसको सबल और स्थाई बनाने में सहायक होता है। इसके साथ ही उसको अपने अनुकूल मनोवृत्ति की दूसरों

की अनुकूल मनोवृत्ति से तुलना करने में भी सहायता मिलती है। इसके साथ ही मनोवृत्ति संगठन व्यक्ति की आत्म सम्मान की भावना को सबल बनाता है।

(5) मनोवृत्ति संगठन के आधार पर व्यक्ति किसी दूसरे व्यक्ति या संस्थान के प्रति अनुकूल और प्रतिकूल मनोवृत्ति में विभेद कर सकता है।

(6) मनोवृत्ति संगठन के द्वारा व्यक्ति की मनोवृत्ति संगठित एवं स्थाई होती है।

(7) मनोवृत्ति संगठन के आधार पर व्यक्ति की मनोवृत्ति किसी वस्तु, व्यक्ति, संस्थान एवं समुदाय के प्रति स्पष्ट होती है।

(8) मनोवृत्ति संगठन की क्रिया द्वारा व्यक्ति की मनोवृत्ति विभिन्न वस्तुओं एवं विषयों से क्रमबद्ध रूप से संबंधित हो जाती है।

(9) मनोवृत्ति संगठन व्यक्ति की मनोवृत्ति को संतुलित एवं स्थाई बनाता है।

(10) मनोवृत्ति संगठन के आधार पर व्यक्ति के व्यक्तित्व की एकता का भी आभास होता है।

10.9 सारांश

(1) सामाजिक तनाव का तात्पर्य उस सामाजिक स्थिति से है जिसमें समाज के सभी या अधिकांश सदस्य चिन्ता, अशांति तथा बेचैनी महसूस करते हैं और पेशीय तनाव के भावों से पीड़ित होते हैं।

(2) सामाजिक तनाव के कई कारण हैं- मनोवैज्ञानिक कारणों में ध्वंसात्मक प्रवृत्ति, निराशा या कुण्ठा, प्रतियोगिता एवं प्रतिस्पर्धा, असमान के प्रति नापसंदगी, असुरक्षा का अभाव, प्रक्षेपण इत्यादि महत्वपूर्ण हैं। व्यक्तिगत कारकों में व्यक्तित्व संरचना तथा व्यक्तित्व संगठन महत्वपूर्ण हैं। इसके अतिरिक्त सामाजिक, आर्थिक, भौगोलिक, राजनैतिक, सांस्कृतिक एवं ऐतिहासिक कारक भी सामाजिक तनाव के कारक माने जाते हैं।

(3) सामाजिक तनाव को दूर करने के कई उपाय हैं। जैसे- स्वस्थ समाजीकरण, उचित शिक्षा, सामान्य लक्ष्य, स्वस्थ राजनीति, अनुकूल विधान, पारस्परिक संपर्क, राष्ट्रीय धन का उचित वितरण एवं आपत्तिजनक ऐतिहासिक घटनाओं पर रोक इत्यादि।

(4) दो जातियों के बीच के तनाव को जातीय तनाव कहते हैं। इसके कई कारण हैं। जैसे- भारतीय समाज में ऊँच-नीच का भाव, उच्च जाति के द्वारा निम्न जाति पर अत्याचार, राजनेताओं द्वारा दुष्प्रचार, अज्ञानी एवं अनपढ़ लोगों की जमात तथा सरकार की अलगाव नीति। जाति तनाव को कम करने के कई उपाय हैं- उचित शिक्षा, अन्तर्जातीय विवाह, आर्थिक समानता एवं कर्म आधृत जाति व्यवस्था।

(5) दो समुदाय के बीच के धार्मिक तनाव को सांप्रदायिक तनाव कहते हैं। सांप्रदायिकता का अर्थ अपने संप्रदाय का हित एवं दूसरे संप्रदाय की उपेक्षा से है। इसमें कई कारण हैं- अन्तर सामुदायिकता, उत्तेजक ऐतिहसिक घटनाएँ, समुदायों के बीच विरोधी धार्मिक विश्वास, सत्ता संघर्ष, अज्ञानता, दोषपूर्ण समाजीकरण, दोषपूर्ण शिक्षा एवं राजनीतिज्ञों की चाल। सांप्रदायिक तनाव कम करने के कई उपाय हैं। स्वस्थ वातावरण, स्वस्थ शिक्षा, स्वस्थ एवं स्वच्छ राजनीति, भारतीय करण एवं उत्तेजित जुलूसों पर प्रतिबंध।

(6) क्षेत्रीयता का अर्थ एक झक्कीपन से है जिसके द्वारा व्यकित अपने क्षेत्र के प्रति प्रेम, आत्मभाव को दिखाता है। इसके कई कारण हैं जिनको मुख्यत: ऐतिहासिक, सांस्कृतिक कारण, राजनैतिक कारक, आर्थिक कारक, मनोवैज्ञानिक कारक एवं भाषा संबंध कारक में विभाजित किया जा सकता है। क्षेत्रीय तनाव को दूर करने के उपाय में राष्ट्रीय धन का बंटवारा, उचित शिक्षा, पारस्परिक संपर्क, सामाजिक सुधार एवं स्वस्थ समाजीकरण को लिया जा सकता है। इसके अतिरिक्त निवासियों में अखण्डता एवं एकता के भाव को प्रोत्साहित कर क्षेत्रीय तनाव दूर किया जा सकता है।

(7) मनोवृत्ति संगठन से तात्पर्य मनोवृत्ति का एक दूसरे से संबेधित होना है जिसके कुछ नियम होते हैं और जिसका आकार और आधार वस्तु संबंध भी होता है। मनोवृत्ति संगठन के कई महत्व हैं- यह व्यक्ति को विचारों एवं विश्वासों को सही एवं संगठित रूप में व्यक्त करने में सहायक है। इसके आधार पर व्यक्ति किसी अन्य व्यक्ति वा संस्थान के प्रति अनुकूल या प्रतिकूल मनोवृत्ति में विभेद कर सकता है। इसमें अतिरिक्त मनोवृत्ति संगठन व्यक्ति की मनोवृत्ति को संतुलित, संगठित एवं स्थायी रूप प्रदान करता है। मनोवृत्ति संगठन के आधार पर ही व्यक्ति के व्यक्तित्व की एकता का आभास होता है।

10.10 पाठ में प्रयुक्त शब्द कुंजी

सामाजिक तनाव,	समूह तनाव,	जाति तनाव,	क्षेत्र तनाव,
वर्ग तनाव,	ध्वंसात्मक,	मूल प्रवृत्ति,	जीवन मूल प्रवृत्ति,
वस्तुगत अभिव्यक्ति,	रचनात्मक,	निराशा,	प्रतिस्पर्धा,
साम्प्रदायिक तनाव,	प्रक्षेपण या आरोपण,	प्रत्यारोपण,	रोगात्मक बैर भाव,
मूल्य,	मानदण्ड,	परम्परा,	रीतिरिवाज,
अलगाववाद,	भौगोलिक,	पृथकवाद,	मुस्लिम लीग,
जनसंघ,	जमाते इस्लामी,	आर०एस०एस०,	जातिवाद,
क्षेत्रवाद,	सम्प्रदायवाद,	वर्गभेद,	सांस्कृतिक प्रतिरूपण,
ऐतिहासिक,	उन्नत वर्ग,	पिछड़ा वर्ग,	उच्च जाति,
निम्न जाति,	स्वस्थ समाजीकरण,	अज्ञानता,	भुखमरी,
स्वस्थ राजनीति,	पारस्परिक संपर्क,	विधान,	अन्तर्जातीय विवाह,
खून-खराबा,	सत्त संघर्ष,	जुलूस,	भारतीयकरण,
नागरिक संहिता,	मनोवृत्ति संगठन	समाकलित गृह परियोजना,	

10.11 अभ्यास के लिए प्रश्न

(क) लघु उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक तनाव के अर्थ को समझाएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.1 देखें

2. मनोवृत्ति संगठन के अर्थ को समझाएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.8 देखें

3. मनोवृत्ति संकलन के महत्व को बताएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.8.1 देखें

(ख) दीर्घ उत्तरीय प्रश्न

1. सामाजिक तनाव के सामान्य कारकों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.2 से 10.2.9 तक देखें।

2. सामाजिक तनाव को दूर करने के उपायों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.3 से 10.3.9 तक देखें।

3. सामाजिक तनाव के विभिन्न प्रकारों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.4, 10.5, 10.6, 10.7 देखें।

4. जातीय तनाव के कारणों तथा उन्हें दूर करने के उपायों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.5.1, 10.5.2 देखें।

5. साम्प्रदायिक तनाव के कारणों एवं उन्हें कम करने के उपायों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.6, 10.6.1, 10.6.2 देखें।

6. क्षेत्रीय तनाव के कारणों तथा उन्हें दूर करने के उपायों का वर्णन करें।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.7, 10.7.1, 10.7.2 देखें।

7. मनोवृत्ति संगठन के प्रत्यय की व्याख्या करें तथा इसके महत्व को समझाएँ।

उत्तर : उत्तर के लिए 10.8, 10.8.1 देखें।

10.12 अन्य पठन सामग्रियाँ

1.	डा० ए० के० सिंह	:	समाज मनोविज्ञान की रूपरेखा
2.	डा० एस० एस० माथुर	:	समाज मनोविज्ञान
3.	तोमर	:	समाज मनोविज्ञान
4.	कुप्पोस्वामी	:	समाज मनोविज्ञान
5.	के० यंग	:	हैंडवर्क की समाज मनोविज्ञान

■